RASTR VANE
G.K.U. 1934

राष्ट्र-वाणी
080581
राष्ट्र
वाणी
राष्ट्रीय-दल का मुख पत्र
अंक १
वर्ष १.
सम्पादक—
शिवकुमार
४।१२।३४
यहां रक्त का बना पसीना
पैदा करते नाना दाना;
वहां निकम्मे बने धनपति
करते मौज बहार ॥
अन्न बिना लाखों मरते हैं
वस्त्र हीन ठिठुरे फिरते हैं,
लज्जा अवनत हैं मां बहिनें,
बच्चे करें पुकार ॥
पानी तक है नहीं मयस्सर
वे श्रमिक बेकार डोलते
यह वैषम्य कहां तक मानव
कितने पापी प्राण डोलते
"भारतीय. आत्मा"

हमारी - घोषणा

"राष्ट्र- वाणी"

(राष्ट्रिय-दल का मुखपत्र)

४।१२। ३८।

हमारी- घोषणा

भारतवर्ष कृषिप्रधानदेश है। इस लिए प्रत्येक भारतवासी का का यह कर्तव्य है कि, वह कृषि-सम्बन्धी समस्याओं पर निष्पक्ष संजीदगी से विचार करे। विशेष कर शिक्षा-संस्थाओं का तो परम कर्तव्य है कि भारत की दरिद्र और अशिक्षित जनता की वास्तविक अवस्था पर विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित करे। इस लिए हम कुलवासियों को अपना सौभाग्य समझना चाहिए कि, इस वर्ष गुरुकुलीय-राष्ट्रिय-प्रतिनिधि-सभा के शरत्कालीन अधिवेशन में "कृषि अधिकार विधेयक" मसविदा पेश होने जा रहा है। इस सम्बन्ध में 'मंत्रीमंडल' या 'राष्ट्रिय-दल' की यह घोषणा है :—

'राष्ट्रिय-दल' की यह नीति है कि किसी व्यक्ति, जाति समाज तथा वर्ग-विशेष के हितों की अपेक्षा राष्ट्र के हितों को ही प्रमुख स्थान दिया जाय।

राष्ट्र के प्रत्येक अंग की उन्नति के लिए प्रयत्न किया जाय और किसी भी अंग पर अनुचित अत्याचार न होने दिया जाय।

और इस लिए 'राष्ट्रिय-दल' किसानों - जो भारत की जनसंख्या के प्रमुख अंश हैं, और वस्तुतः जो असली भारतवर्ष हैं - की आर्थिक अवस्था को सुधारने के लिए, उन्हें जमींदारों के निष्प्राण से मुक्त करने का तथा कृषि की उपज बढ़ाने का पूरा यत्न करेगा।

'राष्ट्रिय-दल' ऐसी संस्थाएं स्थापित करेगा जिन के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति के मन

राष्ट्र-वाणी

मैं ऐसी भावना जाग्रत हो कि, वह "अपनी उन्नति में ही सन्तुष्ट न हो कर सब की उन्नति में ही अपनी उन्नति समझे" और इस के लिए भारत की पुरातन गुरुकुल प्रणाली पर आधारित प्रथा को सर्वहितकारी ~~[illegible]~~ कार्यों के लिए पुनरुज्जीवित करने का प्रयत्न करेगा।

मन्त्री-मंडल :—

राष्ट्रिय-प्रतिनिधि सभा के लिए नियत मंत्री-मंडल या "राष्ट्रिय-दल" के सदस्य निम्न हैं :—

ब्र. बालकृष्ण - प्रधानमंत्री

ब्र. शिवकुमार गृह सचिव

ब्र. भीमसेन न्याय-शिक्षा सचिव

ब्र. लक्ष्मणसिंह अर्थ-सचिव

ब्र. सूर्यप्रकाश परराष्ट्र सचिव

ब्र. केशवदेव युद्ध-सचिव

ब्र. हरिदत्त व्यवसाय तथा श्रम सचिव

ब्र. रवीन्द्रनाथ कृषि सचिव.

शुभ-समाचार

कल ५।१२।३४ बृहस्पतिवार को आयुर्वेद-परिषद् की ओर से 'सिविल-हॉस्पिटल' हरिद्वार के सुयोग्य डाक्टर श्री युत तेजराम M.B.B.S. का "Medical-Ethics" इस विषय पर शिक्षाप्रद व्याख्यान होगा।

निवेदक
बुधानन्द
मंत्री
आयुर्वेद-परिषद.

भूमि अधिकारी नियन्त्रण विधान की रूप रेखा.

रा. पु. स. के शरद्कालीन अधिवेशन में मन्त्रीमण्डल की ओर से 'भूमि अधिकारी नियन्त्रण' विधान सं. १९५१ पेश किया जायगा। उस में प्रस्तावित परिवर्तनों की रूपरेखा नीचे दी जाती है।

इस विधान के बनाने के निम्न उद्देश्य हैं:

(i) कृषि की उत्पादकता को बढ़ाना

(ii) कृषकों की अवस्था को उन्नत करना

(iii) भूमि सम्बन्धी आर्थिक विषमता को दूर करना

इसके लिए प्रस्तावित उपाय

(i) भूमि पर राज्य का अधिकार स्थापित किया जाए

(ii) कृषि के लिए देहकानियों को दी जाए जो भूमि पर स्वयं कृषि करता है।

<u>प्रथम उपाय</u> को कार्य रूप में कैसे परिणत किया जाए?

सरकार प्रत्येक व्यक्ति से उस के स्वामित्व की उसकी आय के २० गुना मूल्य का निर्धारित नियम के अनुसार प्रतिफल दे कर भूमि क्रय कर लेगी और इस प्रकार सम्पूर्ण भूमि पर राज्य का अधिकार स्थापित किया जायगा?

<u>द्वितीय उपाय</u> को कार्य रूप में कैसे परिणत किया जाए?

भूमि की उत्पादकता, कृषि के साधन, सिंचन प्रबन्ध तथा फसलों को ध्यान में रखते हुए भूमि को ऐसे 'अनुपात खंडों' में विभाजित किया जायेगा, जिस पर एक परिवार स्वावलम्बन कृषि करते हुए न्यूनतम मात्रा से सन्तोषजनक जीवन निर्वाह कर सकेगा।

राष्ट्र-वाणी

सामान्यतया जो किसान जिस भूमि पर कृषि करता है उसको वह भूमि कृषि करने के लिए दी जाएगी।

जिनके खेत दूर २ बिखरे हुए हैं उन की चकबन्दी की जाएगी।

बची हुई भूमि से अपर्याप्त जोत के छोटे २ खेतों को उपयुक्त जोत के अनुरूप परिवर्धित बनाया जाएगा।

प्रचलित परिभाषा के अनुसार किसान को केवल जीवन भर भूमि को जोतने के अधिकार होंगे। वह उसको बेच नहीं सकता, उसे रेहन नहीं रख सकता। उसके पुत्रों में भी वह विभाजन न हो सकेगा, हां उसके किसी एक पुत्र को Preference दिया जाएगा।

लगान को १/२० वें भाग से निकाल सहायक सिद्ध घोषित की जाएगी। किसान को उन्नत खाद, बीजों, विधियों तथा रोगों और कीड़ोंमकोड़ों से बचाने की सहायता दी जाएगी।

इन सब प्रस्तावित कार्यों को शीघ्रतर पूर्ण तत्परता से कार्यरूप में परिणत करने के लिए ग्राम पंचायतों का लोकतन्त्रात्मक संगठन किया जाएगा।

(प्रकाशवीर-निर्माण, मंत्रीमंडल)

प्रतीक्षा में

प्रतीक्षा में

श्री सुरू "........"

'नन्दू' और 'रिसाल' नहर के किनारे टहल रहे थे। दोनों बड़े गम्भीर, परन्तु कभी२ दिल्लगी भी सूझ जाती। 'नन्दू' ने बड़े अदब से पूछा।

"क्यों भाई रिसाल! सुना है पार्लमेन्ट का अधिवेशन होने वाला है?"

"हां! सुना तो मैं ने भी है, शायद ब्रह्मानन्द-सप्ताह के आगे पीछे होने को है।" रिसाल ने कहा।

"अच्छा तो फिर कोई चहल-पहल भी......, या यों ही श्मशान की सी हालत रहेगी?" नन्दू ने फिर पूछा।

"खूब जी! खूब! चहल पहल तो खूब रहेगी। देखना इस तरफ 'राष्ट्रवादी' और इस ओर 'साम्यवादी' की करामातें!" रिसाल ने गाल फुलाते हुए कहा।

"तुम किस पक्ष को अधिक पसन्द करोगे?" नन्दू ने जिज्ञासु होकर पूछा।

"आप प्रश्न भी बहुत बढ़िया करते हैं" रिसाल ने कहा! "भला! जरा बताइए तो सही, जब तक दोनों पक्ष मेरी आंखों के सामने नहीं आ जाते तब तक मैं कैसे कह सकता हूं कि अमुक पक्ष मुझे पसन्द आया है और अमुक नहीं। हां शायद मुझे 'राष्ट्र-वादी' पसन्द आएं। क्यों कि मैं अभी प्रतीक्षा में हूं-----"

"किस की?" फिर नन्दू ने बात काट कर कहा।

"मैं बताए देता हूं- इतने उतावले क्यों होते हो"

अंक २	राष्ट्रीय-दल का मुखपत्र ५।१२।३८. सम्पादक - शिव कुमार.	वर्ष १.

पुकार :—
(पीड़ितों की)

(१)

भूख से जो मोर मोर, देश के गरीब मांगे ;
आँख को दिखा के छूटे, कौड़ी न उधार दो।
पूंजीपति और क्रूर, जमींदार मिल हमें;
अपनी जमीनों और मिल से निकाल दो ॥

(२)

ईंट से बजेगी ईंट, आग सुलगेगी तब;
धर्म वाद दोनों मुंह बाए रह जायेंगे।
अन्त में हमारा हर किसान लालवाला होगा;
सेठ जमींदार निज शीश को झुकायेंगे ॥

"कान्चन"

राष्ट्र-वाणी

५।१२।३८

असली-भारतवर्ष

'असली भारतवर्ष गांवों में बसा हुआ है' यह शब्द कुछ भारतवर्ष के सम्बन्ध में अत्यन्त प्राचीन काल से दोहराए जा रहे हैं। प्रत्येक लेखक, प्रत्येक विदेशी यात्री भारत की इस विशेषता को स्वीकार करता है। बम्बई, कराची आदि बन्दरगाहों पर उतरने वाला कोई भी विदेशी यात्री पाश्चात्य सभ्यता में रंगे शहरों को देख कर असली भारतवर्ष का अन्दाज़ा नहीं लगा सकता। अगर शहर को देखने से ही किसी का सन्तोष हो जाता हो तो, उसे समझना चाहिए कि वह भारतवर्ष का गम्भीर अध्ययन नहीं कर सका है, भारत के सम्बन्ध में प्रामाणिक नहीं समझा जाना चाहिए। भारतवर्ष किसानों से भरा पड़ा है। इस की ३५ करोड़ आबादी में से ३२ करोड़ तो गांवों में बसी है और शेष केवल ३ करोड़ शहरों में। ३ करोड़ से भारत की वास्तविक स्थिति का परिज्ञान हो सकता है अथवा ३२ करोड़ से, इस का निश्चय करना प्रत्येक की अपनी बुद्धि पर निर्भर है। हां! तीन करोड़ से भारत की स्थिति को जानने वाला उपहासास्पद ज़रूर समझा जावेगा। उपहास से बचने के लिए भारत की असली स्थिति को मापने के लिए यदि ३२ करोड़ को पैमाना बना दिया जाय तो उचित होगा। इसी लिए यह कहना भी ठीक ही होगा कि असली भारतवर्ष भारतवर्ष की ग्रामीण जनता है और असली भारत गांवों में बसा हुआ है।

लेकिन इस असली भारत की दशा कैसी है? इस पर कुछ भी लिखने में कलम रुका चाहती है। असली भारतवर्ष की दुर्दशा और उस का वर्णन करना, किसी निर्दय लेखनी का काम होगा। वह लेखनी किसी पाषाण-हृदय व्यक्ति के हाथ में होगी। यह सोचते ही दिल चाहता है, कलम को एक तरफ़ रख कुछ कर के दिखाया जाय। लिखा बहुतों ने, पर हुआ कुछ भी न। कहते हैं, लेखनी और वाणी का बड़ा ज़बर्दस्त असर होता है। पहाड़ भी टुकड़े टुकड़े हो जाता है, और क्या कहा जाय। परन्तु असली भारत को देखते ही इस कथन में कुछ सन्देह प्रतीत होने लगता है। इतना होते हुए भी हमारी यह कठोर लेखनी किसी आशा से, किसी उद्देश्य से, और भविष्य में किसी उच्च आदर्श की पूर्ति की सम्भावना से असली भारतवर्ष का नग्न चित्र खेंचने में प्रवृत्त होती है।

असली भारतवर्ष दरिद्रता का शिकार बना हुआ है। उठते बैठते सोते जागते, सुबह शाम, दुनियां के प्रत्येक व्यवहार में उसे गरीबी ही गरीबी दिखाई देती है। वैभव और सम्पत्ति के कारण एक मनुष्य जो

मौज और बहार कर सकता है, इस का अनुभव तो दर किनार, यहां तो एक समय भरपेट रोटी मिलना ही दूभर हो रहा है। हंटर कमीशन की रिपोर्ट के वे शब्द आज भी हमारे कानों में गूंज रहे हैं - जिस में कहा गया था कि, भारतवर्ष में करोड़ों आदमी केवल रोटी न मिलने से मर जाते हैं। दूसरे देशों में दुर्भिक्ष आदि प्राकृतिक उत्पातों के कारण जितने आदमियों की मौत होती है उस से सैंकड़ों गुना मृत्युएं केवल इस लिए हो जाती हैं कि, उन्हें रोटी नहीं मिलती। तन ढकने को कपड़ा नहीं। चीथड़े पहिन पहिन कर गुज़ारा करना बदनसीब भारत के भाग्य में लिखा था। माताओं और बहिनों की लाज बचाने को भी जिस देश में चीथड़ा न हो, समझना चाहिए उस देश के दिन थोड़े हैं। इतना होते हुए भी ग्रामीण जनता की मेहनत! उफ़! याद करते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जेठ-हाड़ का महीना। कड़कती धूप और उस पर अस्थिपंजर मात्र भारतीय किसान का खेतों में हल चलाना! पसीने से तर-बतर होते हुए भी खाली पेट की पूजा के खातिर अपने लहू मांस को आफ़त की गर्मी में फुलसा देना यह किसान की ही बेकसी है। हा! दैव! इस दुर्दशा को देख कर तो अत्याचार भी खून के आंसू बहा देगा। आह! इस हालत को देख कर हमारी आंखों में तो खून उतर आता है। हम पूछते हैं, यह सब क्यों? जो पैदा करे, मेहनत करे और फिर फल न पावे, हन्त आश्चर्य! यह सब क्यों? क्या अनिश्चित युगों से खान यह भारतीय किसान इसी अवस्था में हो रहा था? यदि हां तो क्यों?

प्रश्न का उत्तर स्पष्ट है। इस जांच की आवश्यकता नहीं। भारतवर्ष का वर्तमान सामाजिक-संगठन ही इस का ज़िम्मेदार है। दैव या पूर्वजन्म के कर्मों का फल - आदि सब ढकोसला है। भारत से भिन्न दूसरे देशों ने इस के भेद को समझा है। दैव या भाग्य वैसों तेल रौंदते हैं हो!

यदि यह दैव या भाग्य सामाजिक संगठन का दूसरा नाम हो, तो हमें इस से झगड़ा नहीं। हमें तो इसे भी पांव क्रान्त करना है। परन्तु इस से पूर्व कि इस पर मनन किया जाय, यह जान लेना भी उचित है कि, इस असुर का भारतीय असली जनता पर कैसा प्रभाव है। इस के क्रूर नामों का कौन रसे है-...।

(क्रमशः)

सम्पादकीय-टिप्पणियां.

विजय हो! विजय हो!

इस वर्ष का श्रीगणेश विजय से आरंभ नहीं हुवा। अभी पिछले दिनों दो कुल-बन्धु तैरी के मानुराज्य में गढ़मुक्तेश्वर गए थे। इस वर्ष वह दौनाक न था जो हर साल हुवा करती थी। बिना किसी हल चल के दोनों कुल बन्धु तैरी के चले गए। इस का जो परिणाम रहा, वह हमारे सामने ही है। अस्तु। अब तो जो कुछ हुवा सो हुवा- "बीति ताहि बिसार दे आगे की सुधि लेय।"

अब तो हमारी आँखें मुज़फ्फ़र नगर की ओर लगी हुई हैं। गुरुकुल दल वहां के टूर्नामेन्ट में शामिल होने गया है। एक फ्रेन्डली मैच कर के हमारे दल ने अपनी शक्ति का अनुमान कर लिया है। यों तो वहां का टूर्नामेन्ट कुछ ऐसा वैसा प्रतीत होता है, परन्तु फिर भी हमारे कुल बन्धु वहां पर गए हैं। उन के प्रभाव से ही वहां वालों ने ६ के स्थान पर ४ को टूर्नामेन्ट आरंभ कर दिया है। हम तो उस अवसर की प्रतीक्षा में हैं; जब कि हमारे वे कुलबन्धु कुलमाता का नाम उज्वल कर के आवेंगे। हमें पूर्ण आशा है परमात्मा की कृपा से हमारे कुलबन्धु विजय का हार अपने गलों में डाले २ कुल भूमि में पदार्पण करेंगे।

प्रतियोगिता-सम्मेलन.

प्रतिवर्ष श्रद्धानन्द-सप्ताह के दिनों एक "निबन्ध, गल्प तथा कविता प्रतियोगिता सम्मेलन" की आयोजना की जाती है। इस वर्ष भी वह सम्मेलन होगा- इस की सूचना श्री कुलमंत्री जी दे चुके हैं। पारितोषिक भी नियत हो चुके हैं। इस सम्मेलन की अपनी ही विशेषता है। एक मात्र यही सम्मेलन है, जिस में गुरुकुल की ओर से विद्यार्थियों को आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। महाविद्यालय के ब्रह्मचारियों में निबन्ध तथा गल्प लिखने और कविता करने की शक्ति को प्रोत्साहित करने का यह सर्वोत्तम उपाय है। लेकिन हमें आश्चर्य है कि अब तक कवियों तथा लेखकों की लेखनियां शान्त पड़ी हैं। उन्हें कहना ही दिया जा रहा। जमानत: लेखक आदि तत्वज्ञानी हो गए हों। ख़ैर जो कुछ भी हो, देवलोक वासी कुल पिता की बरसी को सच्चे हृदय से मनाने वाला कोई तो कुलमाता का सुपुत्र मैदान में उतरेगा। बलिदान दिवस मनाना भी उसी के लिए सफल होगा।

राष्ट्र-वाणी

राष्ट्र-प्रतिनिधि सभा के रंगमंच पर

गुरुकुलीय राष्ट्र-प्रतिनिधि सभा के अधिवेशन निकट हैं। इस बार सुना है खूब धूमधाम रहेगी। राष्ट्रीय-दल की ओर 'भूमि अधिकार नियन्त्रण' विधान पेश होगा 'साम्यवादी-दल' इस का विरोध करेगा इस बार की पार्लियामेंट में विशेषता यह होगी कि,

"यदि किसी अन्य सभासद ने रा. प्र. स. में कोई मसविदा या प्रस्ताव पेश करना हो तो उन्हें अपने निजू मसविदे या प्रस्ताव की सूचना लिखित रूप में .... रा. प्र. स के मंत्री के पास भेज देनी चाहिए"
(रा.प्र.स के नियम- पृष्ठ ४. १०/ख)

इस नियम का उपयोग किया जायगा। एक दल 'पंचवर्षीय आयोजन' विधान पेश करेगा और दूसरा 'निर्वाचन- ' दोनों दल अपने संगठन को मज़बूत बना रहे हैं। एक दो दिन में वे अपनी पत्रिकायें भी प्रकाशित कर देंगे। रा.प्र.स के अधिवेशनों में दोनों को कितना २ समय दिया जायगा यह निश्चित हो गया है। प्रतिमंत्री रंगमंच पर आए इन दलों का हम स्वागत करते हैं।

स्नेह-परिचय

राष्ट्र-प्रतिनिधि-सभा में 'भूमि अधिकार नियन्त्रण' विधान को पास कर के भारतीय किसानों के प्रति अपने स्नेह का परिचय दीजिए।

भूमि - व्यवस्था

(वर्तमान समय में)

लेखक - ब्र० बालकृष्ण.

भारत कृषिप्रधान देश है। इसमें लगभग ८० प्रतिशत लोगों के जीवन-निर्वाह का एकमात्र साधन कृषि ही है। भारत की आर्थिक दशा को सुधा-रने के उपायों को सोचते हुये कृषि को नहीं भुलाया जा सकता। यान्त्रिक साधनों के प्रयोग द्वारा कला-कौशल की उन्नति तथा व्यापार की वृद्धि आदि से देश की सम्पत्ति को बढ़ाया जा सकता है। सरकार उसके लिये भी बहुत कुछ प्रयत्न कर रही है। कला कौशल आदि की वृद्धि में किसी विशेष प्रकार की कानूनी बाधा नहीं है। परन्तु कृषि की उन्नति में बहुत कुछ कानूनी बाधायें हैं जिनके कारण कृषि की उन्नति रुकी हुई है। भूमि सम्बन्धी वर्तमान व्यवस्था ही दोषयुक्त है। आजसे कुछ शताब्दी पूर्व जब अंग्रेजों ने भारत में पैर जमाये थे उस समय कृषि-सम्बन्धी कुछ व्यवस्थायें कर दी गई थीं। उसके बाद इस व्यवस्था में कोई महत्वपूर्ण मौलिक परिवर्तन नहीं हुये। इस अर्से में संसार में प्रत्येक देश में बहुत ज़बर्दस्त क्रान्तियां आईं। बहुत शताब्दियों से चली आ रही प्राचीन संस्थायें और प्रथायें समूल नष्ट हो गई हैं। उनका स्थान नवीन समयोपयोगी संस्थाएं ले रही हैं। किसान जो शीतातप में सब प्रकार के कष्टों को सहता हुआ समाज को भोजन-सामग्री मुहय्या करता है स्वयं खाने पीने के लिये दूसरों का मुहताज बना हुआ है। वह अपनी स्त्री की लाज बचाने तथा तन ढांपने तक के लिये कपड़े के टुकड़े को नहीं प्राप्त कर सकता। उसके बालबच्चों की शिक्षा आदि की तो बात ही न्यारी। किसानों की इस प्रकार शोचनीय दशा होने के अनेक कारण हैं। परन्तु इन सब कारणों में प्रधान कारण इन की कानूनी

बाधाएं होती हैं। इस लेखों में हम इन बाधाओं का तथा इनके दूर करने के उपायों की विस्तार से आलोचना करेंगे।

सम्पूर्ण भारत में भूमि-सम्बन्धी एक ही प्रकार की व्यवस्था नहीं वरन् भिन्न २ प्रान्तों में इस व्यवस्था में कुछ अन्तर आ जाता है। इस प्रकार के अनेक स्थानीय और प्रान्तीय भेदों के होते हुये भी हम इन व्यवस्थाओं को तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं।

(i) ज़मींदारी प्रथा – इसमें एक व्यक्ति या कुछ व्यक्ति एक बड़ी जागीर के लिये प्रतिवर्ष निश्चित मालगुज़ारी चुकाने की ज़िम्मेवारी लेते हैं।

(ii) महालवारी – इसमें एक या कुछ व्यक्ति मालगुज़ारी चुकाने के लिये ज़िम्मेवार नहीं होते, अपितु सारा ग्राम ही ज़िम्मेवार होता है।

(iii) रैयतवारी – इसमें हर एक व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से भूमि का स्वामी होता है और स्वतन्त्र रूप से ही मालगुज़ारी चुकाने के लिये ज़िम्मेवार होता है।

भूमिसम्बन्धी व्यवस्थाओं के भिन्न २ होने से ग्रामों के संगठन में भेद होता है। इस दृष्टि से भारतीय ग्राम सामान्यतया दो प्रकार के हैं।

(१) रैयतवारी ग्राम – अनेक किसान जिन्होंने भूमि उत्तराधिकार में प्राप्त की है या खरीदी है या स्वयं जंगल काट कर साफ़ की है - कृषि करते हैं। इस प्रकार के अनेक किसानों के समूह से रैयतवारी ग्राम बनते हैं। हर एक भूमिखण्ड पर अलग २ लगान निर्धारित होता है और उसके चुकाने की ज़िम्मेवारी प्रत्येक व्यक्ति की अलग २ होती है। इस प्रकार के ग्राम मद्रास, बम्बई, बरार, मध्यभारत में बहुसंख्या में पाये जाते हैं। संयुक्त प्रान्त तथा बंगाल में भी मालगुज़ारी और ज़मींदारी प्रथा से दूर पर प्रथा ही प्रचलित रही है।

(ii) ज़मींदारी ग्राम – सारे ग्राम का एक ज़मींदार या कई ज़मींदार स्वामी होते हैं। सारा ग्राम एक इकाई समझा जाता है। ज़मींदार सामान्य कृषक से उच्च जाति के समझे जाते हैं। सारा ग्राम, समूह रूप में, कुछ निश्चित मालगुज़ारी चुकाता है जिसका निश्चित अंश प्रत्येक ज़मींदार को देना होता है। कोई ज़मींदार सरकार की स्वीकृति से ही ग्राम संगठन से पृथक् हो सकता है।

इन ज़मींदारी ग्रामों के बनने के निम्न कारण हो सकते हैं –

(i) एक गांव के ज़मींदार उन व्यक्तियों के वंशज हैं जिन्होंने या तो वह ग्राम स्वयं बसाया है या जिसको वह ग्राम इनाम रूप में दिया गया है। या जो उस ग्राम से लगान एकत्रित करता है, या पहले शासक और सामन्त थे और पीछे ज़मींदार बना दिया गया है।

(ii) अथवा ज़मींदार ग्राम किसी विजयशील तथा उपनिवेश स्थापित करने वाली जाति के कुछ परिवारों का समूह है जो अपने परम्परागत रीति-रिवाजों के अनुसार एक स्थान पर आकर बस गया है।

इन ज़मींदार ग्रामों के ऊपर भी कहीं २ अधिभूमिपति पाये जाते हैं जो सारे ग्राम के ज़मींदार होते हैं। कई ज़मींदार एक से अधिक ग्रामों के अधिपति होते हैं। यहां तक, समूचे ज़िले या परगने का एक ही ज़मींदार होता है। इसके परगने के अन्तर्गत ग्रामों का ग्राम रूप से महत्त्व कम नहीं हो जाता। इस प्रकार की बड़ी २ ज़मींदारियां बंगाल, आगरा व अवध में बहुत संख्या में पाई जाती हैं। बम्बई में कई तरह की ज़मींदारियां पाई जाती हैं। ज़मींदार और -- आदि के सिवाय तालुकदार और खोट आदि पाये जाते हैं जो इस श्रेणी के अन्तर्गत होते हैं। मद्रास में और विशेषतया उसके उत्तरीय प्रदेश में बंगाल के सदृश ज़मींदारियां पाई जाती हैं।

इस प्रकार एक और ऊपर दूसरे के अधिकारों के स्थापित होने से एक दूसरे के आधीन अधिकारों की परम्परा बन गई है। रैयतवारी प्रथा वाले प्रदेशों में यह

समस्या नहीं पाई जाती उनमें प्राय: कृषक स्वयं ही जमींदार होते हैं। कहीं २ रैयत अपने आधीन कृषक नियुक्त भी कर लेती है, परन्तु उनके कानूनी अधिकार स्वीकृत नहीं किये गये। इसके विपरीत ज़मींदारी प्रथा वाले प्रदेशों में यह समस्या बहुत पेचीदा बनी हुई है। राज्य और किसानों के बीच में बहुत सी मध्यवर्ती श्रेणियां पैदा हो गई हैं। बेडन पावेल ने निम्न तालिकामें यह दिखाया है कि राज्य और कृषक के बीच में कितने अधिकार वाली कितनी श्रेणियां पैदा हो गई हैं। इससे इस समस्या की जटिलता स्वयं स्पष्ट हो जाती है।

एक श्रेणी	दो श्रेणियां	तीन श्रेणियां	४ श्रेणियां	
१. राज्य ही सर्वेसर्वा है.	१. राज्य २. रैयत विशेषाधिकार प्राप्त मद्रास, बम्बई, बरार आदि में।	१. राज्य २. ज़मींदार या तालुकदार या ग्रामीण संघ ३. कृषक	१. राज्य २. ज़मींदार ३. उपभूमिपति ४. कृषक	१. राज्य २. अधि भूमिपति ३. भूमिपति या ग्रामसंघ ४. कृषक

उपभूमिपति के अधिकार :- उपभूमिपति विशेष जागीर का स्वामी होता है। परन्तु जो पट्टोंके व्यवस्थापन तथा प्रबन्ध में उसका कोई हाथ नहीं होता। इस श्रेणी के उदाहरण बंगाल में बहुत मिलते हैं। उपभूमिपति अपने अधिकार को बेच सकते हैं, उत्तराधिकार में दे सकते हैं और इस अधिकार के बदले में उन्हें धन की कुछ निश्चित मात्रा ज़मींदार को देनी होती है। ज़मींदारों की प्रधानता के कारण ही इस श्रेणी की आवश्यकता हुई। इसकी स्थिति का स्पष्ट शब्दों में लक्षण करना कठिन है। अत: १८८५ के विधान में १०० बीघे से अधिक भूमि के स्वामियों को उपभूमिपति माना गया है।

(क्रमश:)

रोशन. बी. ए.

साम्यवादी दल.

ले. बालकृष्ण

उ. प्र. स. के शरत्कालीन अधिवेशन में सरकार की ओर से पेश किए जाने वाले 'कृषि-आयकर-नियन्त्रण' मसविदे के प्रति साम्यवादी दल ने अपनी नीति उद्घोषित कर दी है। हमें यह देख कर अत्यन्त आश्चर्य हुआ है कि साम्यवादी दल भी इस मसविदा का विरोध करने की तैयारी कर रहा है। साम्यवादी दल को इस मसविदा का आगे बढ़ कर स्वागत करना चाहिए था। जमींदार और पूंजीपति इस का विरोध करते, तो कुछ युक्तियुक्त था क्योंकि नवीन विधान उन रूढ़ियों से चले आ रहे स्वार्थों पर कुठाराघात करता है। परन्तु नवीन विधान का साम्यवादी दल की ओर से विरोध सर्वथा अनुचित है क्योंकि हम यह कह सकते हैं जमींदार प्रधान देश में साम्यवाद की ओर बढ़ा हुआ प्रगति यदि सम्भव है तो प्रथम पग हमें यही लेना होगा जो इस मसविदे में लिया गया है। साम्यवादियों का परम लक्ष्य यह है कि 'वैयक्तिक सम्पत्ति' के अधिकार के कारण समाज में विषमता बढ़ रही है, सम्पत्तिशाली अपनी धन शक्ति के बल से असहाय, दुर्बल मजदूरों का शोषण करते हैं, इस को किसी प्रकार रोका जाए। विषमता को दूर किया जाए और ऐसा प्रबन्ध किया जाए कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने परिश्रम का पूरा फल मिले, और कोई ऐसा व्यक्ति न हो जो बिना किसी प्रकार परिश्रम के उपभोग करने का साधन ले सके। इस विधान के द्वारा इन्हीं आदर्शों को कार्य रूप में लाने का प्रयत्न किया गया है। भारत में कृषि कर ही अपनी जीविका निर्वाह करने वाले मनुष्यों की संख्या बहुत अधिक है। भारत की सम्पूर्ण जनसंख्या का लगभग ३/४ भाग कृषि पर ही जीवन निर्वाह करता है। और वह कृषि-आयकर-सम्बन्धी व्यवस्था के दूषित होने के कारण

राष्ट्र-वाणी

से ही दुःखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। साम्यवादी दल के इस विचार के हम पूर्णतया सहमत हैं कि भूमि का वैयक्तिक अधिकारों में होना ही इन सब कष्टों का प्रधान कारण है। अतः उसे दूर करना चाहिए। परन्तु इस कार्य को करने के लिए ऐसा उपाय किया जाए कि जिस से सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। तो अधिक अच्छा होगा। कल्पना कीजिए कि जमींदारों तथा भूमि पर किसी प्रकार का अधिकार रखने वाले व्यक्तियों को बिना किसी प्रकार का प्रतिफल प्रदान किए आप उन के अधिकार छीन लेंगे तो क्या आप उन के साथ घोर अन्याय न कर रहे होंगे? और देश को ऐसी आपत्ति में न डाल रहे होंगे जिस से कि निकलना असम्भव हो जाएगा? और जिस उद्देश्य पर आप पहुंचना चाहते हैं उस पर भी न पहुंच सकेंगे। मानवी-स्वभाव की दृष्टि से भी विचार कीजिए कि जमींदार या किसी प्रकार भूमि पर अधिकार रखने वाले व्यक्ति किसी प्रकार का व्यवसाय न करते हुए भूमि के आश्रय ही जीवन निर्वाह करते हैं, एक दम [illegible] को निरुद्यम हो जाएंगे और दर दर भिखारी बन जाएंगे। इन की जो इन के प्राचीन काल से निश्चिन्तता तथा आराम के जीवन की आदत बन गई है, उसे [illegible] कुछ न देगा, और वे इस प्रकार के जीवन की अपेक्षा मरने मारने को तय्यार हो जाएंगे। और देश में चारों ओर विद्रोह और अशान्ति की ज्वालाएं जलती हुई दिखाई देंगी। उस अवस्था में [illegible] व्यवस्था को रखना तक राज्य की शक्ति से बाहर हो जाएगा। देश को [illegible] में जो क्षति पहुंची है वह भी अभी पूरी होने नहीं पाई, ऐसी अवस्था में एकदम नवीन आपत्ति को निमन्त्रण देना अदूरदर्शिता होगी। परन्तु इस का यह अभिप्राय नहीं कि हमें देश की समृद्धि [illegible] के लिए विषमता के इन विशाल दुर्गों को विध्वंस करने का प्रयत्न ही न करना चाहिए। सरकार इस कार्य के सम्पादन के लिए उचित [illegible] यह आवश्यक ही है। साम्यवादी दल [illegible] साम्यवाद की भावनाओं का प्रचार करना चाहिए और अन्य भी देश-उन्नति और समृद्धि चाहने वालों को सरकार के इस प्रयत्न में अवश्य हाथ बटाना चाहिए।

निर्वाचन - विधान

निर्वाचन विधान

रा. पु. स. के ५८-कालीन अधिवेशन में भाषण की
निवृत्ति

आर्थिक अवस्था को सुधारने के लिये 'भूमि अधिकार नियन्त्रण' मसविदा पेश किया जा रहा है। इसी प्रकार भारतीय जनता में राजनैतिक चेतना की वृद्धि के लिए माननीय सदस्य वेदव्रत जी 'निर्वाचन विधान' पेश कर रहे हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि पुरुषों को रोटी-कपड़ा अधिक आवश्यक है या वोट देने का अधिकार देना। इस समय जब कि हमने विदेशी राज्य से संघर्ष करके स्व शासन निर्णय के अधिकार अपने हाथों में ले लिए हैं, हमें समय की आवश्यकता को देखते हुए ऐसे उपयोगी विधान बनाने चाहिए, जिन के कार्य रूप में परिणत करने से देश की वर्तमान विकट आर्थिक समस्या का हल हो सके। परन्तु समय की पुकार को न सुन कर ऐसे विधानों का बना देना जो आर्थिक समस्या के हल करने की अपेक्षा व्यर्थ ही धन का अपव्यय करवाने वाले हों, सरकार तथा जनता दोनों की दृष्टि से हानिकर हैं। निर्वाचन मसविदा इस प्रकार का ही अनुपयोगी तथा खर्च बढ़ाने वाला मसविदा है। इस के दोषों का दिग्दर्शन कराने के लिये हम आलोचनात्मक रूप से प्रत्येक परिच्छेदों का निर्देश मात्र करेंगे।

इसके द्वारा

(1) मताधिकार को अधिक से अधिक व्यापक बना दिया गया है

प्रत्येक व्यक्ति को प्रजा को जिसने केवल प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की है या जो केवल २०) या उस से कुछ अधिक मासिक आय प्राप्त करता है उसको मत देने का अधिकार हो जायगा।

पञ्चवर्षीय आयोजन समिति

नियुक्ति - प्रस्ताव.

स. प्र. स. के माननीय सदस्य जगन्नाथ जी ने स. प्र. स. के आगामी अधिवेशन में एक ऐसी समिति नियुक्ति का प्रस्ताव किया है - जो देश की आर्थिक अवनति के कारणों की जांच कर उन के सुधार के उपाय निर्दिष्ट करे। इस अत्यन्त उपयोगी और महत्वपूर्ण प्रस्ताव के सिद्धान्त रूप में किसी प्रकार का मत भेद नहीं है। देश की आर्थिक अवस्था को जानने तथा उन्नत करने के लिये उपाय सोचे जा सकते हैं उन सब का अवश्य आश्रय लेना चाहिए। यदि कोई [illegible] राष्ट्र पर अपना अन्तः निरीक्षण कर और उन्नति करने के उपायों का निर्धारण करेगा तो उसकी उन्नति हो जायगी। भारत में तो अभी उन्नति की बहुत गुंजाइश है। अनुभवी और विद्वान व्यक्तियों की सलाह से कोई नवीन scheme ऐसी बनाई जा सकती है जिस से देश को वर्तमान आर्थिक संकट के चंगुल से बचाया जा सके तथा सामान्य अवस्था को भी उन्नत किया जा सके।

परन्तु यह तो सर्व विदित ही है कि भारत की आर्थिक उन्नति कृषकों की उन्नति पर ही आश्रित है। कृषक ही वास्तविक भारत का निर्माण करते हैं। कोई भी ऐसा उपाय भारत के आर्थिक संकट को दूर नहीं कर सकता जिस से कृषकों की दशा में किसी प्रकार का भी सुधार नहीं ~~किया जा सकता~~। लाया जा सकता। भारत की [illegible] को एक मात्र सफल आयोजना वह है जो किसानों के कष्टों को दूर कर सके। देश की आर्थिक दशा को सुधारने के लिये ~~[illegible]~~ कृषि के अतिरिक्त शिल्प में भी प्रयत्न आवश्यक है, परन्तु वे प्रयत्न तभी सफल होंगे यदि कृषि की अवस्था अच्छी होगी। क्योंकि व्यापार व्यवसाय के लिये कच्चे माल की आवश्यकता पड़ती है। और वह कृषि के विकास और किसी प्रकार से प्राप्त नहीं किया जा सकता। यदि कृषि के ~~[illegible]~~ कृषकों की अवस्था सुधारने

चिट्ठी-पत्री

जाट बोर्डिङ्ग हाउस,
मुज़फ्फरनगर.
३।१२।३४.

अजी! सम्पादक जी!

जय रामजी की.

सुना है पार्लमैन्ट बहुत समीप है। आप ने 'राष्ट्र-वाणी' को प्रकाशित करा दिया होगा। मैं मुज़फ्फरनगर में बैठा हुवा यहां के समाचार ही भेज सकता हूं। आशा है- स्वीकार करेंगे- समाचार यह हैं —

हम सब स्वस्थ हैं। भाई बलवीर सुबह से कुछ अस्वस्थ हैं, प्रातः की अपेक्षा अब स्वस्थतर हैं। आज सायं हम मुज़फ्फरनगर सिलैक्टिड से मैच खेले हैं। इस में ताराचन्द आदि जब खेले थे। सुना है इस से अच्छी टीम मुज़फ्फरनगर में नहीं है। रणवीरजी, गणपति, बलवीर तथा वीरसेन को छोड़ कर शेष सब खेले थे। बैक स्ना. ब्रह्मदत्तजी खेले थे। एक गोल से मंगलाचरण प्रारंभ हुवा है, आगे देखें क्या होता है।

. . . . टूर्नामैन्ट कल से प्रारंभ हो जायगा। टीमें ड्रा हो चुकी हैं। निम्न प्रकार से हैं —

1. महता क्लब
2. पुलीस क्लब } ५ दिस.
3. S.D.E " } (2–3: ५ दिस.)
4. M.U. " (भारती)
5. P.N " (B)
6. P.N " (A)
7. गुरुकुल

- २. पुलीस क्लब व ३. S.D.E — ५ दिस.
- १. महता क्लब व (विजेता) — ८ दिस.
- ४. M.U. व ५. P.N (B) — ६ दिस.
- ६. P.N (A) व ७. गुरुकुल — ४ दिस.
- (४–७ के विजेता) — ७ दि.
- (फाइनल) — ९ दिसम्बर.

राष्ट्र - वाणी १८

कल सायं हम जाट बोर्डिङ्ग हॉस्टल से वॉली-बाल खेले थे। पहिले गेम में उन के 6 प्वॉइन्ट्स थे और दूसरे में ६। कल प्रातः D. A. V. हॉस्टल से वॉली-बॉल खेल रहे हैं। श्रद्धानन्द-हॉकी टूर्नामेन्ट के लिए पार्टियों को निमन्त्रित किया जा रहा है। रेडवड़ - हाईस्कूल के आने की पूरी उम्मीद है। शेष फिर।

आप का

गणपति -

छपते - छपते

— ब्र. मधुसेन भी लौट कर आ गए हैं। उन्हों ने विश्वास दिला या है कि पर्याप्त पार्टियां टूर्नामेन्ट में शामिल होंगी।

— कल जिन महानुभाव के लैक्चर की सूचना दी गई थी, वे आज बाद दोपहर कुलभूमि में पधारे थे। ठीक $2\frac{1}{2}$ बजे उन का व्याख्यान आरंभ हो जायगा।

गुरुकुल — दिनों दिन.

— श्री प्रो० केशवदेव जी वेदालंकार गुरुकुल हॉकी दल के साथ मुज़फ्फरनगर गए हुए हैं। उन के स्थान पर अध्यक्ष का काम श्री पं० जगन्नाथ जी वि० अ० कर रहे हैं।

— श्री प्रो० सत्यकेतु जी विद्यालंकार किसी कार्यवश बाहिर गए हुए हैं। सम्भवतः वे आज गुरुभूमि में आ जाँय।

— ब्र० यशःपाल जी पिछले दिनों श्रद्धानन्द-हॉकी-टूर्नामेन्ट के लिए बाहिर की पार्टियों को निमन्त्रित करने गए थे। वे कल सायंकाल भोजन के बाद वापिस आ गए। चार पार्टियों ने टूर्नामेन्ट में शामिल होने का वायदा किया है, शायद वे आ भी जाँय।

— इस वक्त तक निम्न ब्रह्मचारी बाहर की पार्टियों को निमन्त्रित करने के लिए गए हुए हैं :—

ब्र० मदनलाल जी.

ब्र० वेदप्रकाश जी.

ब्र० हरिप्रकाश जी.

— ऐसा प्रबन्ध किया गया है कि, 'देवी' नाई एक दिन ११वीं और १२वीं श्रेणी में जाया करे तथा एक दिन १३वीं व १४वीं में।

— महाविद्यालय का अस्थायी भण्डार स्थायी रूप धारण करता जा रहा है। जिस को देखना हो एक बार भण्डार के दर्शन करें आकर।

— आज बुद्धवार है, वेद तथा साधारण महाविद्यालय के ब्रह्मचारी अपने संस्कृत के प्रस्ताव रात के १२ बजे तक आचार्य कार्यालय में भिजवा सकते हैं।

— कार्यालय पर फहराती हुई कुलपताका बार २ कह रही है 'मुझे बदलो! बदलो।'

— महाविद्यालय रोगीगृह में इस समय ५ रोगी आराम कर रहे हैं। इन में से ४ को तो चोट लगी हुई है, और शेष एक के कान में कुछ तकलीफ है। विद्यालय रोगीगृह में दो रोगी आराम कर रहे हैं। जिन में श्री पं० वासुदेव जी वेदालंकार गम्भीर स्थिति में हैं।

— गुरुकुल के पुस्तकालय में आज कल आयुर्वेद की नई २ पुस्तकें आ रही हैं।

— श्रद्धानन्द-सप्ताह में होने वाले अखिल-भारतीय वॉली-बॉल साकुर० के लिए एक Cub आ चुका है। इसी कार्यालय में रख दिया गया है।

अंक 3. | राष्ट्रीय-दल का मुखपत्र ६।१२।३८ | वर्ष १
सम्पादक : शिवकुमार

"हमेशां बैल के साथ काम करने वालों की अकल भी बैल की जैसी हो जाती है।" जैसे कईयों की है।

"करिचार"

\+ \+ \+

"हिन्दुस्तान ग्रामों का बना हुआ है, शहरों का नहीं। इस लिए सच्चा सेवक ग्रामों में जाकर ग्रामनिवासियों की सेवा करेगा। ग्राम सेवा के लिए सब से अधिक आव-श्यकता सेवक की पवित्रता रहेगी।"

"बापू"

राष्ट्र-वाणी

८।१२।३८
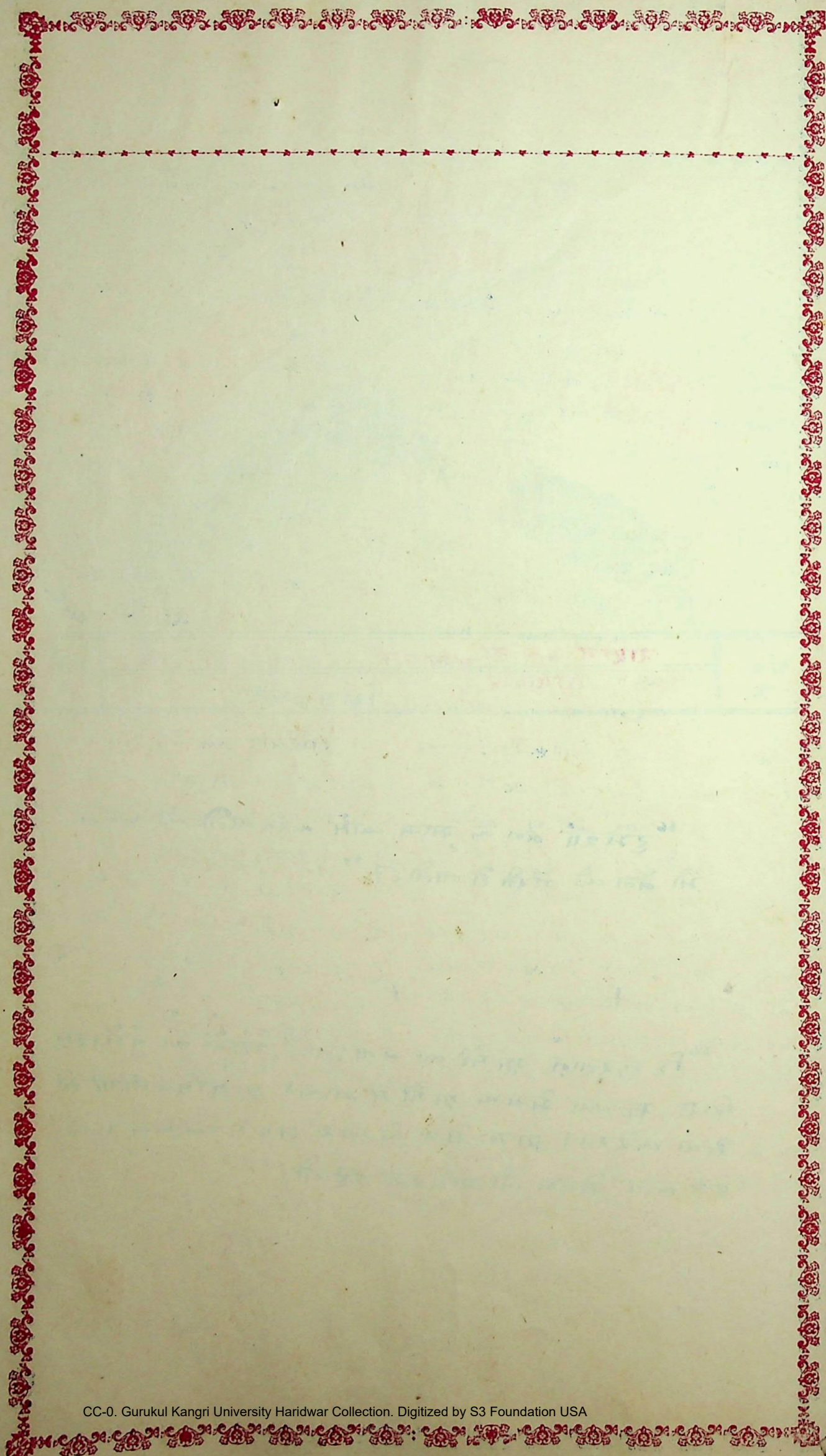
असली-भारतवर्ष
(२)

(गतांक से आगे)

असली भारतवर्ष गावों का बना हुआ है, और इन गावों में अधिकतर उन लोगों की आबादी है, जिन का जीवन निर्वाह खेती पर निर्भर है। परन्तु खेती कुछ ऐसे ढंग से होती है कि इन किसानों का निर्वाह होने नहीं पाता। इस समय भारतवर्ष में जितनी खेती हो रही है, वह इस का आधार दो पृथाएं हैं। एक पृथा ज़मींदारी है, और दूसरी रैयतवारी। इन दोनों को भारतीय समाज के अलावा सरकार भी स्वीकृत करती है। जो किसान रैयतवारी पृथा के अनुसार खेती करते हैं, वे धन भोजन, कपड़ा आदि की दृष्टि से कुछ अच्छी हालत में हैं। इन का ज़मीन पर भी कुछ भी हक़ होता है। यह लोग फिर भी पर्याप्त सुखी हैं।

लेकिन जिन स्थानों पर ज़मींदारी पृथा है, वहां ग़ैर मौरूसी किसानों की अवस्था शोचनीय है। ज़मींदारी पृथा किसान के लिए जितनी घातक हो सकती है, उतनी है। इस के अनुसार किसान को ज़मींदार के अधीन रह कर ज़मीन को जोतना होता है। किसान का ज़मीन पर कोई हक़ नहीं होता। किसान ज़मीन पर खेती करता है और उस के लिए अपने ज़मींदार को सालाना लगान दिया देता है। इस लगान की राशि क्या है, यह निश्चित नहीं। इस लिए ज़मींदार अपने किसान से मनमाना लगान वसूल कर लेता है। किसान के पास अगर लगान चुकाने को न भी हो तो भी उसे उधार ले कर या घाटे में अपनी पैदावार को बेच कर, या दूसरे शब्दों में अपना पेट काट कर ज़मींदार की जेब को भरना होता है। परिणाम यह होता है कि एक दो साल में इस किसान को किसान को अपने महाजन के कर्ज़ के बोझ तले दबना पड़ता है। कर्ज़ बढ़ता रहता है। जिस किसान पर किसी किस्म का भी कर्ज़ है, समझना चाहिए उस किसान का जीना या न जीना दोनों एक बराबर हैं। उस के लिए यह जीवन कुछ मूल्य नहीं रखता, फिर भी पेट को तो भरना होता है। वह लगातार उसी चक्कर में पड़ा रहता है।

ज़मींदार जब चाहे किसान को अपनी ज़मीन से बेदखल कर सकता है। इसी धौंस के कारण ज़मींदार किसान से अनेक विध नाजायज़ टैक्स वसूल कर लेता है। खुशी में हो, चाहे ग़मी में जब उसे ज़रूरत होती है वह बेदखली की नंगी तलवार दिखा कर वह किसान को अच्छी तरह से चूस लेता है। इस पर भी तुर्रा यह कि ज़मींदार इन करों को वसूल करना अपना जद्दी हक़ समझता है। उसे मालूम है कि उस के पुरखा भी किसानों से यह कर वसूल किया करते थे। वे भी उन की रस्म को चिरकाल तक जारी रखना चाहते हैं। परन्तु उन्हें मालूम नहीं, उन के पुरखा का ग़रीब किसानों से कैसा बर्ताव था। उसी बर्ताव के कारण हुआ है कि किसान लोग लगान के अलावा भी अपने ज़मींदारों को कुछ भेंट

किया करते थे। परन्तु आज यह हालत नहीं। ज़मींदारों का किसानों से व्यवहार नहीं जो किसी ज़माने में हुआ करता था। फिर भी ज़मींदार लोग परम्परा से चली आई प्रथा को अपनाए हुए हैं।

बेदखली की तलवार ऐसी भयंकर और डरावनी है कि किसान अपनी खेती पर दिल लगा कर काम नहीं कर सकता। वह खेती तभी तक कर सकता है, जब तक उस का ज़मींदार उस पर मेहरबान है। वह पैसा लगा कर अपनी ज़मीन को बढ़ा नहीं सकता। उस का दिल चाहता है कि वह ज़मीन को अपना ले - अपना सारा जीवन उस के सुधार में लगा दे लेकिन उसे निराश होना पड़ता है। उसे झट यह ख्याल आ जाता है, यह सब कुछ करने से लाभ तो ज़मींदार को होता है। थोड़ी देर के लिए वह परोपकार की भावना से भी अपनी इच्छा को पूर्ण कर लेता है, लेकिन फिर उसे बेदखली की याद आ जाती है। वह इतना दब्बू और चापलूस हो जाता है कि ज़मींदार की हर एक इच्छा को पूर्ण करने के लिए अपने आप को तैयार रखता है। ज़मींदार का हुकुम हुआ नहीं कि उस ने माना नहीं। ज़मींदार की घुड़कियों - झाड़ और डपट को वह बेबस हो सहन करता है। बेगार में भी आप काम करने को कहा जाय, तो हुँह से न कर नहीं निकलेगी। ज़मींदार के कारिन्दे जो अत्याचार करते हैं, उन्हें भी अपने सिर पर सहना होता है।

कहने का अभिप्राय यह, कि जितने भी अत्याचार सम्भव हो सकते हैं - वे सब के सब ज़मींदारों द्वारा किसानों पर हो रहे हैं और किसान इन सब को केवल खेती की खातिर बर्दाश्त कर रहे हैं।

इस के अतिरिक्त मौजूदा भारत सरकार को खेती में ज़रा भी शौक नहीं। वह इस दिशा में सर्वथा उदासीन है। इस समय भारतवर्ष में खेती पर गुज़ारा करने वालों की संख्या दिनों दिन बढ़ रही है। लेकिन उपज के या पक ज़मीन में कुछ सुधार नहीं हो रहा। ऐसी भी ज़मीनें भी हैं, जो कि खेती के लायक होती हुई भी पड़ती छोड़ दी जाती हैं। उन्हें cultivable waste कहा जाता है। इन में कुछ पर तो सिंचाई का प्रबन्ध नहीं, और जिन पर सिंचाई का प्रबन्ध है, तो वे स्वास्थ्य के लिए ठीक नहीं। लाभ वहां किस प्रकार आ सकते हैं? बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए भी सरकार के कान पर जूं नहीं रेंगती। एक तरफ लोग रोटी! रोटी! चिल्ला रहे हैं और दूसरी ओर बहुत कुछ ज़मीन पड़ती छोड़ दी गई है। गांव के किसान उन से लाभ उठाना चाहते हैं, परन्तु उन के पास साधन नहीं। उन्हें इजाज़त नहीं कि वे उन भूमियों को अपना सकें।

सरकार ने ज़मीन को जो इस समय चक-बन्दी कर रखी है वह इतनी अस्वाभाविक और किसानों के लिए हानिकारक है कि जिस का कोई ठिकाना नहीं। किसानों के पास ज़मीनें हैं, लेकिन टुकड़ों

टुकड़ों में। अगर यह टुकड़े समीप समीप होते — तो भी कोई बुरी बात न थी। यहाँ तो एक एक टुकड़ा कोसों दूरी पर रहता है। किसान को प्रबन्ध करने में बड़ी असुविधा रहती है। वह एक समय में अपनी सारी ज़मीन का निरीक्षण नहीं कर सकता। आज वह अगर एक टुकड़े पर है तो कल दूसरे पर। वह एक स्थान पर निश्चिन्त हो कर बैठ ही नहीं सकता। अपनी ज़मीनों की सिंचाई के लिए, उन पर आने जाने के लिए उसे सैकड़ों किसानों से लड़ाइयां मोल लेनी पड़ती हैं। सिर-फुटौवल तक की नौबत आ पहुंचती है। सरकारी अदालतों में इस विषय के सैकड़ों मुकदमे रोज़ दायर होते हैं, परन्तु फिर भी सरकार का इन झगड़ों की जड़ को खोदने की ओर कभी ध्यान नहीं गया।

सरकार किसान की इतनी भी सहायता नहीं कर सकती कि उस की पैदावार ठीक दामों पर बिक सके। किसान अपने अनाज को गाड़ियों में भर कर मंडी में ले आता है। मंडी में आते ही मुकाबिले में पड़ कर प्रत्येक किसान की वस्तु की दर में कमी हो जाती है। वह चाहता है, कि इस समय अपना अनाज न बेचे लेकिन ज़मींदार की चाबुक और महाजन की झिड़की उसे याद आती है। इसलिए न

है। इसलिए भी उसे अपनी पैदावार को सस्ते दामों में बेचना पड़ता है। उन का माल कौन खरीद करते हैं? यह दलाल! जिन का अनाज की उत्पत्ति में कोई हिस्सा नहीं होता। यह लोग मुफ्त में ही अपनी जेब गरम करते रहते हैं। इन लोगों की सदा यह कोशिश रहती है कि जब तक बाज़ार मन्दा है, तब तक किसानों से हर एक चीज़ खरीद ली जाय और दाम चढ़ते ही उन चीज़ों को बेच कर मुनाफ़ा हासिल कर लिया जाय। भारतवर्ष में इस किस्म के सैकड़ों दलाल बड़े जागीरदार बन चुके हैं। यह लोग स्वार्थ में अन्धे हो कर किसानों के भले की सोच ही नहीं सकते। इस लिए किसानों को अज्ञान-वश इन के फन्दों में फंस जाना पड़ता है।

इस प्रकार हम ने देखा कि अपनी—भारतवर्ष खाद्य सामग्री को उत्पन्न कर के भी भूखा है, दूसरों की जेब भर कर के भी स्वयं निर्धन है। जो कुछ वह दूसरों के लिए करता है अपने आप उस से महरूम है। वह चाहता है उसे ज़मीन मिल जाय, लेकिन इस के लिए कोई समुचित प्रबन्ध नहीं। इन सब बातों को देख कर "गांधि-दलों" इस बार रा. प्र. स. के अधिवेशनों में "भूमि अधिकार निर्णय" विचार पेश करने जा रहा है।

सम्पादकीय - टिप्पणियां.

साम्यवादी दल :-

गुरुकुलीय राष्ट्रप्रतिनिधि सभा के आगामी अधिवेशन में जो मसविदा पेश किया जाना है, उस का विरोध करने के लिए 'साम्यवादी' दल का संगठन बड़े ज़ोरों से हो रहा है। अब तक की सूचना के अनुसार इस के ४५ सदस्य भी हो चुके हैं। यह ४५ सदस्य किस लिए साम्यवादी दल के पोषक हो गए यह अभी तक ज्ञात नहीं हुआ। लोग कहते हैं, साम्यवादी दल ने 'भूमि अधिकार नियन्त्रण' विधान के सम्बन्ध में जो नीति उद्घोषित की है, शायद वह ही इस का कारण है। साम्यवाद शब्द सुनने में कानों को बहुत अच्छा लगता है। संसार में साम्यवाद की प्रतिष्ठा दिनों दिन बढ़ती जा रही है। प्रत्येक व्यक्ति अपने आप को साम्यवादी कहलाने में गौरव समझता है। साम्यवादी होना मानो स्वर्ग का सम्राट् होना है।

साम्यवाद संसार के सब वादों में अच्छा समझा जाता रहे, हमें इस में कोई आपत्ति नहीं। साम्यवाद की इस बात से हम लोग भी आम सहमत हैं कि वैयक्तिक-सम्पत्ति का अधिकार नहीं होना चाहिए। वैयक्तिक सम्पत्ति के अधिकार का युग बीत गया। रूस के बोल्शेविकों से दुनियां अब समझ गई। परन्तु प्रश्न यह है भारतवर्ष में से इस प्रथा को किस तरह से दूर किया जाय और खास कर ज़मीन पर के व्यक्ति विशेष के अधिकार को किस तरह से दूर किया जाय। साम्यवादी-दल का कहना है- स्टेट को ऐसा कानून बनाना चाहिए कि जिस से हर एक ज़मींदार की ज़मीन को ज़ब्त कर लिया जाय। वह एक दम क्रान्ति चाहता है। उस की इच्छा है परिवर्तन हो- और जीवन में बेहतर हो। एक तरफ़ भारत की पंच-स्थापित सभा या राष्ट्र-प्रतिनिधि सभा कानून बना रही है और जनता उसे बिना किसी चूं चां के स्वीकार कर ले। स्वीकार ही नहीं अपितु उस के अनुसार काम भी शुरू कर दे। साम्यवादी दल कीड़े की तरह रेंगना पसन्द नहीं करता। वह तो हर काम को करने के लिए मोटर की तरह वेग से उड़ान लेना चाहता है। उसे कदम कदम कर चलना पसन्द नहीं। वह कुछ पलों में मंज़िल मकसूद पर पहुंचना चाहता है। उसे आत्म-विश्वास है कि जब एक बार साम्यवादी दल चल पड़ा तो मार्ग में आने वाली प्रत्येक दिवार का चकनाचूर हो जायगा।

[शैल मित्र]

"भूमि और वैयक्तिक स्वत्वाधिकार"

प्र. बाल कृष्ण

भूमि पर व्यक्ति का अधिकार होना चाहिए या राज्य का। इस विषय पर दो भिन्न दृष्टियों से विचार किया जाएगा। प्रथम विचारणीय विषय यह होगा कि भूमि पर व्यक्तियों का अधिकार होना न्यायोचित है या राज्य का। और दूसरा विचारणीय विषय यह होगा कि इन दोनों प्रकार की संस्थाओं में सामाजिक हित की दृष्टि से कौन सी अधिक उपयोगी है।

रशिया को छोड़ कर सब देशों में वैयक्तिक सम्पत्ति का अधिकार स्वीकार किया जाता है। वैयक्तिक सम्पत्ति को मनुष्य के स्वभाव के उत्कृष्ट अंशों के विकास की दृष्टि से परमावश्यक समझा जाता है। अतः अत्यन्त प्राचीन काल से सब देशों में यह प्रथा चली आती है। प्राचीन साहित्य में सर्वत्र प्रायः इस की पुष्टि की जाती रही है। मनुष्य स्वभाव की यह विशेषता है कि वह जिन रीति रिवाजों, संस्थाओं और प्रथाओं में रहता है, उन को अनिवार्य समझने लगता है। अपनी संस्थाओं के प्रति उस के हृदय में श्रद्धा और भक्ति का भाव पैदा हो जाता है वह उन्हें दैवीय समझने लगता है। वह यह कल्पना ही नहीं कर सकता कि कोई ऐसा समाज भी हो सकता है जिस में यह रिवाज न हो और फिर भी वह अच्छा हो। मनुष्य स्वभाव की इसी प्रकार की संकुचितता के कारण ही हम देखते हैं कि समाजें किसी रीति रिवाज, संस्था और प्रथा की उपयोगिता न रहने पर भी उन से चिपटी हुई रहती हैं। भूमि पर वैयक्तिक या सामाजिक अधिकार के औचित्य और अनौचित्य, उपयोगिता और अनुपयोगिता पर विचार करते हुए हमें अपने हृदयों में से इन में से किसी के प्रति पहले से संस्कारों से अविचार पूर्ण पक्षपातों को निकाल देना चाहिए। और समाज के भूत का वर्तमान और भविष्यत् अवस्थाओं का विचार करते हुए इन को सामाजिक हित की कसौटी पर परखना चाहिए।

यह संस्थाएं और प्रथाएँ समाज में ही पाई जाती हैं। समाज से बाहर इन को कहीं स्थान नहीं है। अतः इन का प्रयोजन सामाजिक हितों की रक्षा और उन्नति के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। जब तक इन से सामाजिक हितों की वृद्धि हो तब तक इन को बने रहने देना चाहिए, और जब यह उपयोगी होने के स्थान पर समाज पर भार स्वरूप हो जाएं तब इन का समूलोच्छेद ही अधिक उपादेय है।

इस लेख का प्रधान विषय 'वैयक्तिक सम्पत्ति' के अधिकार की आलोचना करना नहीं है, अपितु 'भूमि का वैयक्तिक सम्पत्ति होनी चाहिए या नहीं' यह ही इस लेख का विचारणीय विषय है।

भूमि की विशेषताएँ —

(i) भूमि उन मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने का साधन है जिनकी पूर्ति के बिना जीवन असम्भव है।

(ii) भूमि की मात्रा परिमित है, इस की वृद्धि और न्यूनता बहुत कम होती है। नवीन उपनिवेशों के अन्वेषण से एक दम बहुत सी कृषि योग्य भूमि बढ़ गई थी, परन्तु अब किसी नवीन उपनिवेश के निकल आने की सम्भावना नहीं है। क्योंकि समुद्र में यातायात अब भली भांति होने लगा है, जहाज़ों द्वारा पृथिवी के सारे भूमि-पृष्ठ की छानबीन कर ली गई है, कोई ऐसा प्रदेश नहीं बचा जहां अभी तक मनुष्य की पहुंच न हुई हो और जहां उपनिवेशों के होने की सम्भावना भी हो।

(iii) भूमि की तीसरी विशेषता यह है कि यह हमेशा एक सी रहती है, नष्ट नहीं होती। एक उपज के बाद भूमि की उर्वरता कुछ कम हो जाती है, परन्तु कुछ समय तक खाली छोड़ देने से, या उचित खाद आदि रासायनिक साधनों के प्रयोग से भूमि की उर्वरता को कायम रखा जा सकता है।

भूमि और ....

किसी अन्य प्रकार की सम्पत्ति में उपरिलिखित गुण इतनी अधिक मात्रा में नहीं पाए जाते। इन कारणों से ही भूमि धन अन्य धनों से भिन्न है।

इन विशेषताओं के साथ भूमि की और चतुर्थ विशेषता है, जिस के कारण यह कहा जा सकता है कि भूमि वैयक्तिक सम्पत्ति नहीं हो सकती।

(४) भूमि किसी व्यक्ति विशेष के श्रम का फल नहीं है। वैयक्तिक सम्पत्ति के अधिकार की युक्तियुक्त रूप से स्थापना यही हो सकती है, कि जिस वस्तु को व्यक्ति ने अपने परिश्रम से कमाया है उस पर उस व्यक्ति का ही अधिकार भी रहना चाहिए। अन्यथा कोई भी मनुष्य किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए परिश्रम ही न करेगा। परन्तु भूमि के सम्बन्ध में यह युक्ति लागू नहीं होती क्योंकि भूमि तो हवा, पानी आदि की तरह प्रकृति की ही देन है, जिस प्रकार हवा, पानी आदि पर व्यक्ति विशेष का अधिकार नहीं, प्रत्येक व्यक्ति खुली हवा में जा कर अपने स्वास्थ्य को बना सकता है, और जलप्रपातों और नदियों में अपनी तृषा को शान्त करने के लिए यथेष्ट जल प्राप्त कर सकता है, इसी प्रकार भूमि का भी माता का भी सदुपयोग करने का प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार होना चाहिए। हवा, पानी आदि किसी की बपौती नहीं है, इसी प्रकार भूमि भी बपौती न होनी चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं, वायुयान, तथा जलयान आदि द्वारा कई जातियों ने जल पर एकाधिपत्य जमा लिया है, और ऊँची २ अट्टालिकाओं से युक्त नगरों में बहुत से लोगों को शुद्ध स्वच्छ वायु भी उपलब्ध नहीं हो सकती, इस पर भी अनेक व्यक्तियों ने मानो एकाधिपत्य जमा लिया हो। परन्तु फिर भी क्योंकि जल, वायु और पृथिवी किसी व्यक्ति विशेष के श्रम से

पैदा नहीं हुए अतः भूमि पर किसी व्यक्ति विशेष का स्वामित्व होना न्यायोचित नहीं। इस पर मानव समाज का ही अधिकार होना चाहिए।

पहला प्रश्न यह है कि इस प्रकार की अन्यायपूर्ण प्रथा मानव समाज में किस प्रकार बद्धमूल हो गई है? इस प्रश्न का उत्तर भूमि पर वैयक्तिक अधिकार भिन्न २ परिवर्तनों की अवस्थाओं में से गुज़र कर वर्तमान रूप में पहुंचा है, एतद्विषयक इतिहास का अवलोकन करने से ही मिल सकता है।

यह स्पष्ट है कि जब मानव समाज भ्रमणशील जातियों की अवस्था में था जो कृषि करना न जानती थी, जिनके जीवन का निर्वाह शिकार तथा वन्य कन्दमूल होते थे तब भूमि पर किसी प्रकार के अधिकार की समस्या न थी। उस अवस्था में व्यक्ति का न व्यक्तियों का अधिकार था और न ही समाज का। और इसके अनन्तर जब धीरे २ कृषि प्रारम्भ हुई तब भी यह समस्या बहुत विकट न हुई थी, क्योंकि प्रथम तो, भूमि विपुल मात्रा में उपलब्ध हो सकती थी, किसी व्यक्ति को अपनी भूमि का सीमा-बन्धन करने की आवश्यकता न थी। और कृषि करने के साधन हीन कोटि के थे अतः किसान एक भूमिखण्ड पर कृषि करके उसे छोड़ देते और फिर नवीन खण्ड पर खेती शुरू कर देते थे, क्योंकि नवीन भूमि खण्ड पर थोड़े परिश्रम से पुष्कल अन्न पैदा किया जा सकता है। इस प्रकार इस अवस्था में भूमि सारी जाति की सम्पत्ति थी, उसके वैयक्तिक हक से विभाग नहीं हुए थे।

धीरे २ जब जनसंख्या में वृद्धि होनी शुरू हुई है तब उत्पत्ति की वृद्धि के लिए उन्नत उत्पादक साधनों का प्रयोग करना पड़ता है। और भूमि यथोचित

अब भी जातीय अधिकार में थीं तो भी उन्हें परिवारों
में कृषि के लिए समान रूप से अलग-अलग तौर पर विभक्त
कर दिया गया और चौथे अलाई विभाजन
की असुविधा को दूर करने के लिए उसे स्थाई
बना दिया गया।

इन अवस्थाओं के बाद जो चतुर किसान अधिक
साधनों के प्रयोग से उसी भूमि से और किसानों की
अपेक्षा अधिक उपज करते हैं, वे अपनी-अपनी उपज को
अन्य किसानों की तरह जातीय अधिकार में देना पसन्द
नहीं करते। वे अपने परिश्रम के बदले में अपनी उपज के
बढ़े हुए अंश का स्वयं उपभोग करना चाहते हैं। इन अवस्थाओं
में प्रत्येक परिवार ही अपने हिस्से के भूमि खण्ड का स्वामी
स्वामी माना जाने लगता है। परन्तु अभी उसका स्वामित्व
पूर्ण रूप से स्वीकृत नहीं किया जाता, क्योंकि परिवार
का प्रधान व्यक्ति उस भूमि को बेच नहीं सकता, छोड़ नहीं
सकता और उत्तराधिकार के रूप में पुत्र पौत्रों को नहीं दे
सकता। क्योंकि अभी तक उस पर बहुत कुछ
समाज का ही अधिकार होता है।

भूमि अधिकार व्यवस्था में बहुत सी आकस्मिक
घटनाओं का भी प्रभाव पड़ता रहा है। वह आकस्मिक घटना
प्रधानतया युद्ध या विजय ही है। इस भूमि
पृष्ठ पर विजय ही कोई उद्देश्य होता जैसे विजयशील
जातियों ने पूर्व निवासियों से छीन कर
हस्तगत कर लिया हो। विजयी जातियाँ चाहे उस पर
स्वयं कृषि करना प्रारम्भ न करती हों तो भी उनका
उस भूमि पर कानूनी अधिकार स्थापित हो जाता है।
भूमि पर कृषि तो प्रायः वही लोग करते हैं
जो पहले से कृषि करते चले आ रहे हैं, परन्तु भूमि
पर स्वामित्व विजयी जातियों के व्यक्तियों के हाथ में
आ जाता है। कृषक और भूमिपति में भेद और प्रतिभेद
निश्चित हो जाते हैं, भूमिपति के कुछ अधिकार हो जाते

है और किसान भी लाचार अपनी जीविका के लिए उसकी कृपा पर आश्रित हो जाता है। किसान भूमिपति की आज्ञा के बिना भूमि न किसी दूसरे व्यक्ति को दे सकता है और न स्वयं छोड़ सकता है। भूमिपति आवश्यक नहीं विजयी जाति के ही हों, क्योंकि प्रायः विजयी जाति पराजित जाति के उन व्यक्तियों को भूमिपति बना देती है जिन्होंने उनकी युद्ध में किसी प्रकार की सहायता की थी, या अब उनकी किसी प्रकार से सहायता करने को तैयार हैं। यूरोप में मध्यकाल में इस प्रकार का ही विभाजन सामान्यतया सर्वत्र पाया जाता था, और भारत में आजकल भी यह विभाजन प्रचलित है। बड़े ज़मींदार और राजे महाराजे इसी प्रकार के विभाजन के परिणामस्वरूप ही पाए जाते हैं।

परन्तु यह आर्थिक विभाजन भी चिर-स्थायी नहीं है। जैसा कि एक अंग्रेज़ी के कवि ने कहा है

Princes and Lords may flourish and fade
A breath can destroy them
As a breath has made.

भूमि सम्बन्धी वर्तमान व्यवस्थापन में भी परिवर्तन आना स्वाभाविक है। यह इस दशा युक्त है कि भूमि पर जिन व्यक्तियों के स्वत्वाधिकार स्थापित हुए हैं वे दैवीय नहीं हैं, और न ही वे किसी युक्ति या न्याय के सिद्धान्त पर आश्रित हैं। इन अधिकारों का एक मात्र कारण 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' के सिवाय और कुछ नहीं। यदि इस सम्बन्ध विविध आर्थिक स्थलों को पुराने तो इस प्रथा के बुरे परिणाम अविकल रहे हों, और वे इस सीमा तक पहुँच गए हों कि जातीय जीवन में क्षय रोग के कीटाणुओं का काम कर रहे हों तो इन को केवल रीति से विध्वंस करना अनुचित नहीं है।

भूमि सम्बन्धी वर्तमान अवलोकन की उपयोगिता को पूर्णरूप से समझने के लिए हम अब भूमि सम्बन्धी समस्या के एक अन्य पहलू पर विचार करेंगे।

अर्थशास्त्र में रिकार्डो का 'लगान' के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त प्रतिपादित किया जाता है जो भूमि की समस्या पर नवीन प्रकाश डालता है।

सामान्यतया यह कहा जाता था कि भूमि पर लगान इस लिए लगाना चाहिए, क्योंकि भूमि द्वारा किसान अपनी पूंजी और श्रम की अपेक्षा अधिक उपज पैदा कर लेता है, राज्य उस का संरक्षण करता है और उसे अन्य प्रकार की सुविधाएं पहुँचाता है अतः राज्य के कार्य के सञ्चालन के लिए किसान को अपनी उपज का विशेष अंश राज्य को देना चाहिए। परन्तु रिकार्डो को यह विचार बहुत पसन्द न आया। उसने नवीन रीति से लगान के सिद्धान्त की स्थापना की।

रिकार्डो का लगान सम्बन्धी सिद्धान्त :— जब कुछ मनुष्यों को पहले पहल भूमि के किसी छोटे टुकड़े पर खेती करने की आवश्यकता महसूस होती है तो वे किसी ऐसे उत्तम भूमि खण्ड को चुन लेते हैं जिस पर न्यूनतम पूंजि से अधिक से अधिक उपज पैदा की जा सके। इस अवस्था में भूमि के प्रचुर मात्रा में मिल पड़े होने के कारण उस पर परिमाण ह्रासमान नियम के कारण कृषि करने से विशेष लाभ नहीं होता। परन्तु ज्यों ज्यों जन संख्या में वृद्धि होनी प्रारम्भ होती है त्यों त्यों उत्पत्ति की आवश्यकता बढ़ती जाती है। और इस से अधिक भूमि पर खेती करनी आवश्यक हो जाती है। इस प्रकार कृषि की आवश्यकता बढ़ने पर धीरे २ कृषि के लिए सर्वोत्तम भूमि समाप्त हो जाती है, और उस से निचले दर्जे की भूमि पर कृषि करना आवश्यक हो जाता है अन्यथा समाज की बढ़ी हुई आवश्यकता को पूरा करना असम्भव हो जायगा। सर्वोत्तम भूमि से निचले दर्जे की भूमि पर पूंजी और श्रम अधिक लगाकर

अधिक लगाना पड़ेगा। कल्पना कीजिए कि प्रथम कोटि की भूमि में प्रति एकड़ 30 मन गेहूं पैदा होता है और उस पर खर्च 30) पड़ता है। इस प्रकार १ मन गेहूं पर १) खर्च पड़ा। और द्वितीय कोटि की भूमि में उतनी ही पूंजी तथा श्रम से प्रति एकड़ 20 मन गेहूं पैदा होता है और उस में प्रति मन गेहूं १।।) खर्च पड़ता है। यह स्पष्ट है कि द्वितीय कोटि की भूमि पर कृषि करने वाला १।।) प्रति मन से कम दामों पर नहीं बेचेगा क्योंकि इतना तो उस का लागत व्यय ही है। यदि उसे प्रति मन १।।) रु. भी न मिलेंगे तो कृषि करना ही बन्द कर देगा। परन्तु यह मान लिया गया है कि जनसंख्या की अधिकता के कारण अनाज की मांग बहुत बढ़ी हुई है अतः उस का अनाज कम से कम १।।) रु. प्रतिमन के दाम पर तो अवश्य ही बिक जायगा। प्रथम कोटि की भूमि वाला किसान जब अपने पड़ोसी किसान को १।।) रु. मन के दाम पर अनाज को बेचते हुए देखेगा तो वह भी अपने अनाज को १) रु. प्रतिमन के भाव से बेचने को तैयार न होगा- अपितु वह भी अपने अनाज का भाव १।।) रु. मन कर लेगा। इस प्रकार उस किसान को एक मन पर ।।) बचत होगी, और एक एकड़ पर १५) बचत होगी। रिकार्डो इस बचत को ही आर्थिक लगान कहता है।

इस प्रकार जनसंख्या के निरन्तर बढ़ते रहने से तृतीय चतुर्थ और इस प्रकार निकृष्टतम भूमि पर भी खेती करनी आवश्यक हो जाती है। और निकृष्टतम भूमि से उत्पन्न उपज की लागत दाम ही सारी उपज के लागत दाम को निर्धारित करेगा। इस से प्रथम, द्वितीय तथा निकृष्टतम कोटि से उत्कृष्ट सम्पूर्ण भूमियों को उपज पर पर्याप्त लाभ प्राप्त होगा।

इस से स्पष्ट है कि लगान, भूमि की अधिक उपजाऊपन पर आश्रित नहीं, अपितु आपेक्षिक उपजाऊपन पर ही आश्रित है। जितनी कम उपजाऊ भूमि पर कृषि की जायेगी। आ० लगान उतना ही बढ़ेगा।

और साथ यह भी जानना चाहिए कि अनाज का मूल्य इसलिए अधिक नहीं होता क्यों कि किसान को बहुत सा लगान चुकाना पड़ता है अपितु इसके विपरीत अनाज के भाव के अधिक होने के कारण ही लगान देना पड़ता है।

१ उपर्युक्त सिद्धान्त में वर्णित ऐतिहासिक घटनाक्रम निर्दिष्ट प्रकार से घटित न हुआ हो तो भी इस सिद्धान्त की सामान्य रूप से सत्यता में सन्देह नहीं किया जा सकता। इस से स्पष्ट है कि जिन व्यक्तियों ने उत्तम भूमियों पर स्वत्वाधिकार जमाए हुए हैं वे बिना किसी प्रकार का विशेष परिश्रम किए सामाजिक परिस्थिति के कारण समृद्ध होते चले जा रहे हैं। जन संख्या की वृद्धि के अतिरिक्त रेल गाड़ी आदि यातायात के साधन, तथा डाकखाने आदि के प्रबन्ध से भी अनाज को मण्डियों में लाने की सुविधाएं तथा खर्च भी बहुत कम हो गए हैं। इन सब साधनों के कारण भूमि तथा उस की उपज के दामों में वृद्धि होती जाती है और उस का विशेष लाभ बड़े ज़मीदारों की जेब में ही समा जाता है।

यह सिद्धान्त बहुत साफ स्पष्ट रूप से कार्य करता हुआ दिखाई नहीं देता, इस का कारण नवीन उपनिवेशों में बची हुई बहुत सी भूमि है जिस पर अभी खेती होनी शुरू नहीं हुई। जनसंख्या अधिक बढ़ने पर उस पर भी खेती प्रारम्भ हो जाएगी। और दूसरा कारण कृषि के नवीन वैज्ञानिक साधन हैं जिन से नयी कृषि की जाती है। इन वैज्ञानिक साधनों के द्वारा थोड़े स्थल तथा थोड़े परिश्रम से अधिक अनाज पैदा किया जाता है इस से परिणाम स्वरूप निकृष्ट कोटि की भूमि का महत्व बहुत कम हो जाएगा और शायद नौबत यहां तक पहुंच जाए कि उस पर खेती करना ही छोड़ दिया जाए।

रिकार्डो के लगान सम्बन्धी सिद्धान्त की मीमांसा से यह स्पष्ट हो जाता है कि कुछ लोग जिन्होंने उत्तम भूमियों पर स्वत्वाधिकार जमाए हुए हैं वे सामाजिक परिस्थितियों के परिवर्तन से अनुचित लाभ उठा रहे हैं। भूमिपतियों की इस अनर्जित आय (unearned increment) पर स्वाभाविकतया राज्य का ही अधिकार होना चाहिए। इस लिए भूमि सम्बन्धी व्यवस्था में कुछ मौलिक परिवर्तन होने आवश्यक हैं जिन से कम से

अनर्जित आय तो समाज को प्राप्त हो जाए जिस से उस का उपयोग समाज हितकारी कार्यों में किया जा सके। इस के लिए आवश्यक हुआ कि सम्पूर्ण भूमि पर राष्ट्र का ही स्वामित्व घोषित किया जाए। तभी अन्यायपूर्ण भूमि सम्बन्धी शोषण को दूर किया जा सकेगा। और उन के स्थान पर न्याय तथा उपयोगिता दोनों को महत्व देकर नवीन व्यवस्थापन किया जा सकेगा, और समय की आवश्यकता को पूरा कर सके। यह परिवर्तन इस प्रकार होना चाहिए जिस से बहुत से अवांछनीय दुष्परिणामों को भी रोका जा सके, इन्हीं विषयों पर यहाँ प्रकाश डालेंगे।

चक बन्दी

लेखक - ब्र. हरिदत्त.

किसान राष्ट्र का अन्नदाता होता है। देश के अन्य सभी व्यवसायियों, का वह आधार होता है। राष्ट्र उसी से प्राप्त सम्पत्ति द्वारा अपना निर्वाह करता है। यह बात भारतवर्ष के लिये अन्य देशों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। इस देश के ८० प्रतिशतक निवासी कृषि से ही अपनी आजीविका कमाते हैं। भारतवर्ष की समृद्धि किसानों की समृद्धि पर आश्रित है। भारत ~~क~~ उनकी समस्यायें सारे देश की समस्यायें हैं। कोई भी राष्ट्रीय सरकार उनकी ज्यादा देर तक उपेक्षा नहीं कर सकती। सरकारें अपने नेताओं के प्रभाव से थोड़ी देर तक भले ही उन्हें दबा लें परन्तु अन्त में उनकी अशान्ति का ज्वालामुखी फूट ही पड़ेगा। ~~कुर~~ फ्रांस और रूस की राज्यक्रान्तियां इस ~~के~~ बात की साक्षी हैं।

किसानों के लिये यह बड़े हर्ष की बात है कि वर्त्तमान राष्ट्रीय सरकार ने उनकी ~~के~~ महत्ता का पूरी तरह से अनुभव किया है और उनकी समस्याओं का सुलझाने का काम अपने हाथमें लिया है। पहली सरकारों ने तो किसानों को कामधेनु समझ रखा था। उनसे जबर्दस्ती लगान लेना और खून चूसना ही उनका कर्त्तव्य था। पर इस राष्ट्रीय सरकार ने किसानों की समृद्धि में अपनी समृद्धि समझी है। ~~उन~~ पहली सरकारों ने जमीन्दारों के हाथ में अपरिमित शक्ति दे दी, और उन्हें किसानों को लूटने की खुली छुट्टी दे दी। और उस लूट को - उन गरीबों की गाढ़ी मेहनत से कमाई धन राशि को - आपस में बांटने के ~~लिये~~ समझौते लज्जास्पद समझौते किये। इन का परिणाम बहुत भयंकर हुआ। जमीन्दार और सरकार रूपी चक्की के दो पाटों में किसान बुरी तरह पिस गये। न उनके पास खाने को कुछ रहा और न कुछ ओढ़ने को। राष्ट्रीय सरकार ने इस बुराई को अच्छी तरह से अनुभव किया। किसानों की दशा उन्नत करने

के उपाय सोचे। वर्तमान राष्ट्र प्रतिनिधि सभा में उपस्थित वर्तमान बिल उसी का परिणाम है।

आज कल किसान बहुत गरीब हैं। बिल में उन की गरीबी के मुख्य कारण को दूर करने का प्रयत्न किया गया है। यह प्रयत्न चकबन्दी के रूप में है जिस को एक पृथक् अध्याय दिया गया है।

यहां पर हिन्दू मुसलमानों के उत्तराधिकार सम्बन्धी कानूनों में साम्यवाद पाया जाता है। बाप के मरने के बाद योग्यायोग्यता का कुछ भी विचार न करके उस की जमीन सब उत्तराधिकारियों में बांट दी जाती है। पहले तो भारतवर्ष में संयुक्त परिवार पद्धति थी। सब लोग एक वयोवृद्ध पुरुष के नियन्त्रण में रहते थे। जमीन टुकड़ों में विभक्त होने पर भी अविभक्त ही रहती थी। परन्तु पाश्चात्य सभ्यता के प्रवेश से यहां पर व्यक्तिवाद की लहर चल पड़ी। वैयक्तिक स्वतन्त्रता का पाठ पढ़ कर किसी बड़े व्यक्ति के अनुशासन में रहना युवक समुदाय को खलने लगा। पुरानी प्रथा के विरुद्ध प्रतिक्रिया हुई और वह उस लहर के वेग को न सहार सकी। पिछली शताब्दी में लंकाशायर के कारखानों ने भारत का विश्वविश्रुत वस्त्र व्यवसाय चौपट कर डाला। अन्य व्यवसाय भी पाश्चात्य देशों की मशीनों से बने माल के सामने न टिक सके। रेल के सामने बैलगाड़ी कब तक टिक सकती थी? व्यवसायों का ह्रास होने से सब भूमि को ही आजीविका का अन्तिम साधन मान कर उस की ओर लपके। इन दिनों में जनसंख्या भी तेजी से बढ़ रही थी। इन सब बातों का परिणाम किसानों के लिए बहुत ही अहित कर साबित हुआ। जमीन के अत्यधिक छोटे २ टुकड़ों में बांटी जाने लगी। छोटे २ से जमीन की वह अवस्था आ पंहुची कि उस पर खर्च ज्यादा होने लगा और आय कम। अर्थशास्त्र की परिभाषा में कहें तो वह जमीन अनुत्पादक हो गयी।

जमीन की अनुत्पादकता और छोटे २ टुकड़ों द्वारा हुई हानि एक उदाहरण स्पष्ट हो जायगी। मान लीजिये एक किसान के चार लड़के थे। उस की जमीन चार बीघे थी। एक हल, एक जोड़ी बैल, एक फावड़ा, एक कुदाली और अन्य आवश्यक औजार थे। उसके मरने पर उस के पुत्रों में सम्पत्ति झगड़ा चला। इकट्ठे मिल कर

में रहनेवाले सीरवारीन था। हिन्दू कानून के अनुसार भी चारों उस ज़मीन के समानरूप से हकदार थे। चारों में एक २ बीघा ज़मीन बांट दी गयी। यदि तो उस किसान की ज़मीन एक ही जगह पर हो तो उसका सौभाग्य समझिये। परन्तु आजकल जमीनें प्रायः भिन्न २ स्थानों पर बिखरी हुई होती हैं। एक टुकड़ा गांव के पास है तो दूसरा आधा फर्लांग पर दूर। खेत का पांच छः टुकड़ों में बिखरा होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है परन्तु सर्वथा स्वाभाविक है। यदि किसान की ज़मीन बिखरी हुई थी तो हर एक लड़का उस के हर एक टुकड़े का एक चौथाई का लेना चाहेगा। जो खेत पहले पांच भागों में बंटा था वह अब भी बीस भागों में बंट जायगा। पहले एक जोड़ी बैलों से उन का पिता सारा खेत जोत लेता था पर अब उन में इतना तो सौहार्द बचा नहीं कि एक ही जोड़ी से काम चलावें। चारों एक २ जोड़ी बैल लेंगे अन्य भी उपकरण खरीदेंगे पर उनके पास तो खरीदने के लिये रुपया पैसा भी नहीं है। चारों भाई गांव के साहूकार के पास कर्ज लेने को जायगें। एक बार कर्ज के चक्कर में पड़ गये तो फिर उस से उभरना उन के लिये कठिन बात है। किसान इस बात को अच्छी तरह से समझते हैं परन्तु वे कर्ज लेने को विवश हैं। उन की गरीबी के मुख्यतम कारणों में से यह भी एक है जो कि भूमि के विभजन से प्रारम्भ होता है।

वे बैलों का पूरा पूरा उपयोग नहीं उठा सकते। दो बैल तो २० बीघे की खेती बड़ी आसानी से कर सकते हैं परन्तु अब उन्हें ५ बीघे की खेती करनी पड़ती है। एक बीघे से उत्पन्न अन्न किसान के लिये स्वयं पर्याप्त नहीं होता परन्तु बैल को भी चारा देना पड़ता है। इस तरह बैलों पर खर्च तो अधिक पड़ता है पर आय कुछ नहीं होती।

अपने खेत की रक्षा चोरों से रक्षा के लिये उसे अपने खेत के चारों ओर बाढ़ लगवानी पड़ेगी। यदि उनके खेत बिखरे हुए न होते तो चार जगह ही बाढ़ लगती परन्तु खेत बिखरे होने से अब उन्हें २० जगह बाढ़ लगानी पड़ेगी जो कि उनके लिये बहुत खर्चीली होगी। बाढ़ न लगा कर यदि रक्षक रखे जांय तब भी ज्यादा खर्च होगा।

सिंचाई का प्रबन्ध भी उन के लिये कठिन है। यदि उनमें से किसी की ज़मीन की नीचे पानी हो तो कुआं खुदवाने का खर्च बहुत पड़ेगा जो कि उस की सामर्थ्य से बाहर है। यदि नहर या किसी दूसरी जगह से पानी लाया जावे तो उस के लिये नालियां दूसरों की भूमि में से ... में से

पानी न ले जाने दें तो झगड़ा उत्पन्न पैदा होजाता है। इन्हीं पानी के झगड़ों में सिर फोड़ने तक की नौबत पंहुच जाती है। अदालत में मुकद्दमे होते हैं। किसानों की सारी कमाई उनमें ही फुक जाती है। यदि नालियां बन भी जांय तो उनमें बहुत सी भूमि नष्ट होजाती है। साधारणतया एक खेत से दूसरे खेत को जाने वाले के मार्गों में भी जमीन बहुत व्यर्थ में खर्च होती है। प्रत्येक किसान अपने खेत को जाने का छोटे से छोटा मार्ग ढूंढता है। यह मार्ग कभी कभी दूसरे के खेत के बीच में से होकर जाते हैं। खेत का कुछ भाग खराब हो जाता है और झगड़े बढ़ जाते हैं।

किसानों का अपने खेतों के एक टुकड़े से दूसरे टुकड़े तक जाने में समय लगता है। यदि ये खेत एक ही जगह होते तो इतना समय व्यर्थ न जाता। इसी तरह खाद भी उन्हें ढोकर भिन्न २ जगहों पर बिखरे टुकड़ों पर ले जानी पड़ती है। चकबन्दी होने से यह परिश्रम भी बच जायेगा।

भारतवर्ष में कृषि पर अवलम्बित आदमियों की संख्या बहुत ज्यादा है। कृषकों और इन कृषकों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। कृषि की भूमि निश्चित है। इसलिये यहां पर किसानों को यह प्रयत्न करना चाहिये कि कम से कम भूमि में से अधिक से अधिक अनाज पैदा करने का प्रयत्न करें। अन्य देशों की तुलना में भारतवर्ष की फीएकड़ की उपज आधे से भी कम है। इसके लिये यहां पर कृषि के तरीकों में सुधार की आवश्यकता है। ट्रैक्टर थ्रेशर आदि का उपयोग उनके लिये कठिन है परन्तु खेतों के बिखरे होने से वे अपने पशुओं को भी खेत पर नहीं रख सकते। खेतों में गढ्ढे करके उनमें खाद भरना भी उनके लिये कठिन है। यह सब कुछ चकबन्दी से ही हो सकता है।

अन्त में हम राष्ट्रीय सरकार को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते। उसने किसानों की गरीबी के कारण को अच्छी तरह से समझा है। वह इस गरीबी को दूर करने के लिये कानून बना रही है। यह कानून पहली सरकारों के कानूनों की भांति नहीं है जिसमें जमीन्दारों को असीमित अपरिमित शक्तियां दे दी जाती थीं परन्तु इस कानून में किसानों को भूमि पर हीन हयात का स्वत्व दिया गया है और उनका भूमि से बेदखल नहीं किया जा सकता है। — (अपूर्ण)

भूमि = व्यवस्था (वर्तमान समय में) (गतांक से आगे) पृ. १८ से आगे

ज़मींदार जिन व्यक्तियों को अपनी जायदाद का कुछ भाग ठेके पर देता है वे भी इस श्रेणी में ही आ जाते हैं। इस प्रकार ठेके पर ज़मीन लेने वालों को पट्टीदार और इनके आधीन दूसरों को दर पट्टीदार कहते हैं।

इसके अतिरिक्त भूमि पर वस्तुतः कृषि करने वाले सब किसानों की स्थिति प्रायः एक जैसी नहीं है। कई किसानों का भूमि पर किसी प्रकार का अधिकार नहीं है। ज़मींदार जब चाहे उनसे अपनी भूमि छुड़वा कर उन्हें अकस्मात ही दर २ का भिखारी बना दे। और क्योंकि भूमि की मात्रा परिमित है और किसी अन्य व्यवसाय आदि के न होने से उस पर आश्रित व्यक्तियों की संख्या भी बहुत अधिक है, इसलिये किसान अधिक से अधिक लगान देना स्वीकार कर ज़मीन को ले लेता है। ज़मींदार जब चाहे लगान बढ़ा सकता है, कानून की दृष्टि में भूमि पर इन किसानों का किसी प्रकार का अधिकार नहीं है। इस प्रकार के किसान को गैर मौरूसी काश्तकार कहते हैं।

इसके विपरीत मौरूसी काश्तकारों के भूमि पर कुछ अधिकार स्वीकृत कर लिये जाते हैं। (i) ज़मींदार निश्चित काल तक निश्चित मात्रा से अधिक लगान नहीं बढ़ा सकता। लगान में वृद्धि ज़मींदारों और किसानों के पारस्परिक समझौते या अदालत की स्वीकृति से ही हो सकती है। बंगाल के कानून के अनुसार लगान की वृद्धि १५ वर्ष में एक बार हो सकती है और जो समझौता हो वह लिखित ही होना चाहिये। एक रुपये के पीछे दो आने से अधिक लगान नहीं बढ़ाया जा सकता। अदालत लगान में वृद्धि तब कर सकती है जब आसपास के अन्य किसानों की अपेक्षा लगान कम हो या उपज के दाम बढ़ गये हों। या ज़मींदार के प्रयत्न से या सिंचन के प्रबन्ध आदि से उपज की मात्रा बढ़ गई हो इत्यादि। इसी प्रकार इसके विपरीत अवस्थाओं में कम भी किया जा सकता है।

(ii) किसान को ज़मीन से बिना विशेष कारणों के पृथक् नहीं किया जा सकता। (iii) यह अधिकार किसान की सन्तान के पास उत्तराधिकार के द्वारा भेजा जा सकता है। (iv) ज़मींदार को जब सरकार छूट आदि देगी तब ज़मींदार को उसी अनुपात से छूट आदि देनी होगी। (v) किसान को लगान

में वृद्धि किये बिना किसी प्रकार से भूमि की उपज बढ़ाने के भी कुछ मात्रा तक अधिकार दिये गये हैं। इसप्रकार मौरूसी काश्तकारों के लिये ऐसे नियम बनाये गये हैं जिससे अनुचित लगान, भूमि की स्थिरता तथा विक्रयाधिकार का लाभ उठा सकें।

मौरूसी काश्तकार के अधिकार प्रायः उनको मिलते हैं जो पहले कभी स्वयं ज़मींदार थे और अवस्थाओं के परिवर्तन से काश्तकार बन गये। ज़मींदार और अधिभूमिपतियों के अधिकार जितने अधिक होंगे और उन्हें निष्कासन का जितना अधिक अवसर मिलेगा किसानों के अधिकार उतने ही कम होंगे।

जिन किसानों के बारे में यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि उनके पूर्वज ज़मींदार थे, उनको मौरूसी काश्तकार के अधिकार नहीं मिलते। उन्हें भी मौरूसी काश्तकार के अधिकार उपलब्ध हो सकें इसके लिये यह कानून बनाया गया कि १२ वर्ष तक निरन्तर एक भूमि पर कृषि हो। इस कानून के प्रयोग से बचने के लिये ज़मींदार किसी किसान को एक भूमि पर १२ साल काश्त करने ही न देते थे। इस अवस्था को देखकर इस कानून में परिवर्तन किया गया कि उसी भूमि पर १२ वर्ष तक कृषि करना आवश्यक नहीं, अपि तु उसी गांव में १२ वर्ष तक निरन्तर खेती करने से मौरूसी अधिकार उपलब्ध हो जाते हैं। पञ्जाब में मौरूसी अधिकार केवल उनको मिल सकते हैं जिनके पूर्व उस स्थिति के पक्ष में किसी प्रकार के ऐतिहासिक आधार हों अर्थात् यह सिद्ध हो जाय कि उनके पूर्वजों ने कम से कम दो पीढ़ियों तक सरकार को सीधी मालगुज़ारी दी है। किसी ज़मींदार को लगान नहीं। मध्य भारत में मौरूसी अधिकार वार्षिक लगान के २½ गुना दाम देकर कृषक खरीद सकते हैं।

रैयतवारी प्रदेशों में भूमि अधिकार — इन प्रदेशों में किसान और राज्य के बीच में ज़मींदार आदि मध्यवर्ती श्रेणी का विकास बहुत कम हुआ है। इसलिये इन प्रदेशों में एक दूसरे के अधीन अधिकारियों के भिन्न अधिकारों की कोई समस्या नहीं है।

(अपूर्ण)

ब्र० बालकृष्ण

चिट्ठी-पत्री

(१)

जाट बोर्डिङ्ग हाउस,
मुज़फ्फरनगर
४।१२।३४.

श्री सम्पादक जी!

नमस्ते.

कल मैं ने आप को यहां के समाचार भेजे थे। आशा है 'राष्ट्रवाणी' में प्रकाशित हो गए होंगे। लीजिए कुछ और भी -

आज के मैच में हमारी टीम ने दो गोल से कामयाबी हासिल की। आज की टीम असल में P.N.(B) थी [हाई में P.N.(A)] भैया और सत्यानन्द ने एक एक गोल किया। पं० केशवदेव जी आज अस्वस्थ होने के कारण नहीं खेले। आज की game एक दम ठंडी रही। यहां पर टैन्ट्री की १२) दे दी गई है। यहां से वर्दियां लाने की पूरी कोशिश हो रही है। आज सवेरे वॉली-बॉल में दोनों games हार के जीता पर पहिली हार गए थे। कल मंडी की V. B. की टीम से मैच है। भाई बलवीर अभी कुछ बीमार हैं। मैं, ब्रह्मवीर जी, वीर सेन आज खेले- अमरनाथ और ~~[illegible]~~ सन्तोषकुमार नहीं खेले।

आपका

गजपति

=

(2)

आर्य बोर्डिङ्ग हाउस,
मुजफ्फरनगर.
५।१२।३४.

श्री सम्पादक जी!

नमस्ते.

आज सायंकाल यहाँ पर Police और S.D.E क्लब का मैच हुवा। जिस में Police 3 गोल से हारी है। S.D.E क्लब की पार्टी पिछले वर्ष से बहुत अच्छी है। क्यों कि उस में मेरठ के खिलाड़ी भी शामिल हैं। उन के Forwards तो Hounds की तरह दौड़ते हैं। उन्हें check करने के लिए अभ्यास की आवश्यकता है। पहिले मैं लिख चुका हूँ कि हमारी पार्टी ने यहां पर पहुंचते ही Muzaffar nagar-selected से मैच किया था। उस में हम लोग विजयी रहे थे। लेकिन अभी Edward से पाला पड़ेगा। इस लिए जल्दी से जल्दी ब्र. मनिशंकर को भिजवाने का प्रबन्ध कीजिएगा।

आज गुरुकुल की V. B. टीम ने भी काफी मेहनत के बाद हराया है। यद्यपि पहिली game वे जीते थे। यह टीम काफी अच्छी है। इन्हें भी वहाँ पर लाने की कोशिश की जा रही है। अब आगे कोई मैच शायद नहीं होंगे।

बलवीर सत्य ठीक हैं। शेष सब भी स्वस्थ हैं।

आपका —
गणपति

राष्ट्रवाणी

अंक ४	राष्ट्रीय दल का मुख पत्र ११२।३४	वर्ष १
	सम्पादक: - शिव कुमार	

"दुनियां भर के किसानो! और मज़दूरो! मिल जाओ।"

"कार्ल-मार्क्स"

\+ \+ \+

"भारतवर्ष की जनता संसार में सब से अधिक व्यवसाय शील है। उस की ज़मीन बहुत उपजाऊ है। भारतवर्ष को इस से ख़ासी इन्कम हो जाती है। लेकिन जिस वक्त दुर्भिक्ष आदि प्राकृतिक उत्पातों का प्रकोप होता है - यही जनता हज़ारों की संख्या में मरती है और करोड़ों की संख्या में अपनी शारीरिक शक्ति को खो बैठती है।"

"रैम्ज़े मैकडानल्ड"
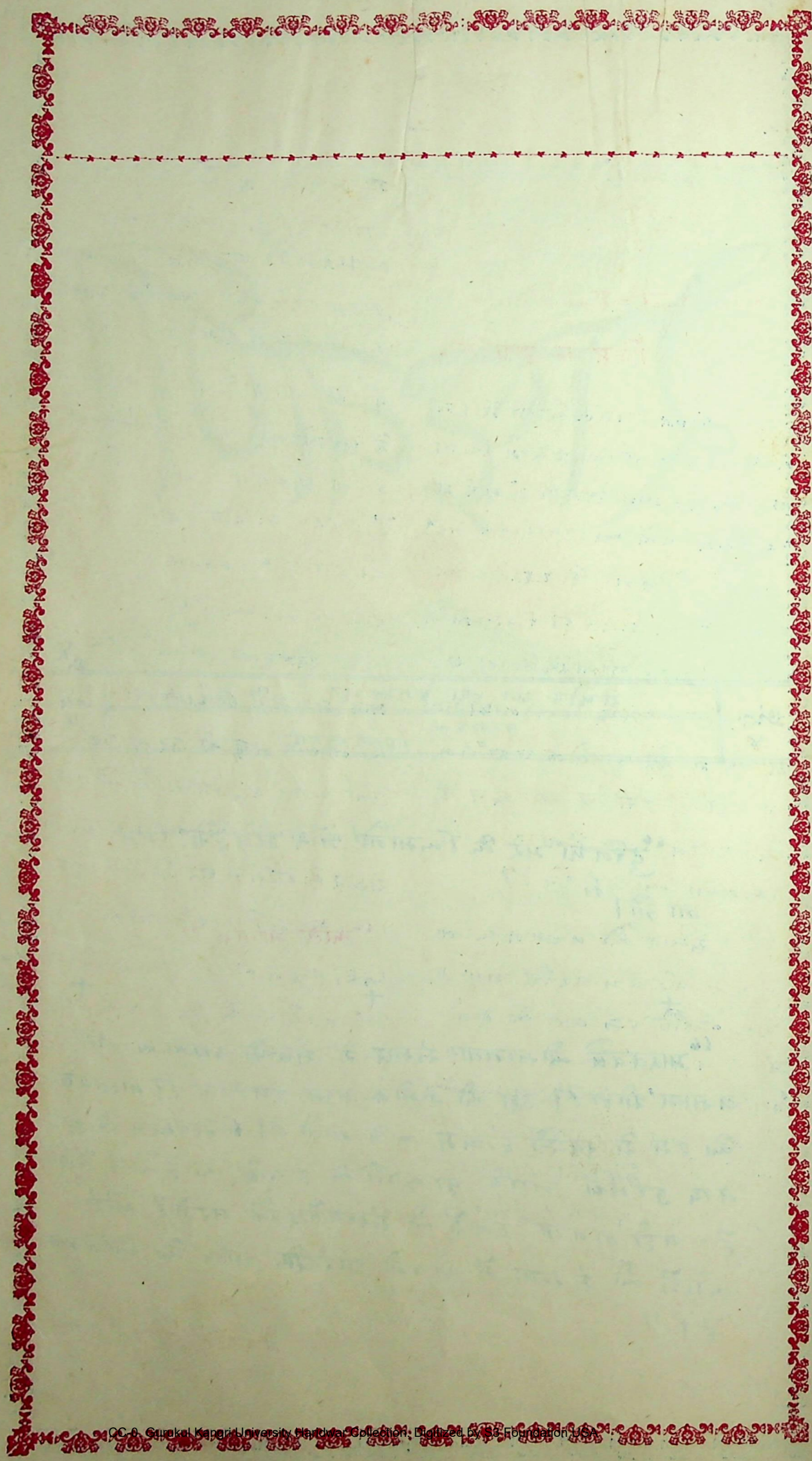
राष्ट्र वाणी

७।१२।३४

मैन- खिचः

किस के हाथ में?

अपने पिछले लेखों में हम ने यह दिखाने का प्रयत्न किया था कि, वर्तमान समय में भूमि पर किन लोगों का आधिपत्य है और उन की वजह से भारतीय किसानों की क्या हालत है। किसानों की उस हालत को सुधारने के लिए गुरुकुलीय राष्ट्र-प्रतिनिधि सभा में कौन सी तजवीज़ पेश होने जा रही है, उसी का सार रूप में दिग्दर्शन करा देना अब की लेखमाला का उद्देश्य है।

संसार के वर्तमान घटना-चक्र से परिचय रखने वाला प्रत्येक व्यक्ति इस बात को भली-भांति जानता है कि, इस समय 'व्यक्तिवाद' (Individualism) और 'समष्टिवाद' (Socialism) में घोर संग्राम छिड़ा हुआ है। यह संघर्ष 'पूंजीवाद' और 'साम्यवाद' में भी प्रकट हो रहा है। 'पूंजीवाद' या 'व्यक्तिवाद' अपने पराक्रम दिखा चुका है। 'साम्यवाद' पूंजीवाद के खंडहरों पर अपने ~~स्वप्नमहलों पर~~ गगनचुम्बी महलों को खड़ा करना चाहता है। 'पूंजीवाद' एक वाद (Thesis) था, अब उस का प्रतिवाद (Anti-thesis) साम्यवाद के रूप में प्रकट हो चुका है। यह तो समय ही बतायेगा कि दोनों में किस की विजय होगी। यहां इतना बता देना पर्याप्त होगा कि 'पूंजीवाद' या व्यक्तिवाद की विरोधी शक्ति 'साम्यवाद' या समष्टिवाद की मांग क्या है!

साम्यवाद चाहता है कि वर्तमान समय में राष्ट्र की सम्पत्ति का मालिक राष्ट्र की सरकार को होना चाहिए, व्यक्ति को नहीं। उस की मांग है कि, व्यक्तिवाद को संसार के रंगमंच पर से उड़ा दिया जाय, क्योंकि उस ने अपना नाटक दिखा लिया। पहिले व्यक्ति अपनी ही सोचता था; अपने स्वार्थों पर उस की पहिले नज़र जाती थी, समाज पर पीछे। किन्तु साम्यवाद उलटी गंगा बहाना चाहता है- वह समाज को पहिले देखना चाहता है, व्यक्ति को पीछे। सार रूप में यही साम्यवाद की मांग है।

'साम्यवाद' या समष्टिवाद की यह मांग चाहती है कि, संसार के राष्ट्र अपने यहां की वैयक्तिक सम्पत्तियों को हड़प कर लें। उन पर

स्टेट का आधिपत्य हो जाय। भूमि भी एक प्रकार की सम्पत्ति है। इस सम्पत्ति का महत्व इतना है कि, मिल और हर्बर्ट स्पेन्सर जैसे व्यक्तिवादियों ने कहा था- कम से कम इस पर तो समाज का आधिपत्य हो जाना चाहिए। यूरोप के दूसरे अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों तथा बड़े बड़े फ़िलॉसफ़र्स ने भी इस मत का मुक्तकण्ठ से समर्थन किया। इसी भूमि की सम्पत्ति की वजह से 'समष्टिवादियों' के दो फ़िर्क़े हो गए; जिन में से एक कहता तो यह था- कि स्टेट को राष्ट्र की प्रत्येक वस्तु पर एकाधिपत्य होना चाहिए और इसे Communism या उग्र साम्यवाद कहा जा सकता है। इस के विपरीत दूसरे फ़िर्क़े का यह कहना था कि- स्टेट का आधिपत्य केवल भूमि आदि प्रकृति की वस्तुओं पर होना चाहिए। क्यों कि यह मानवीय रचना या उपज नहीं होती। भूमि स्टेट की सम्पत्ति होनी चाहिए- इसलिए भी कि, इस में इसकी सम्पत्ति की अपेक्षा विशेषताएं बहुत हैं। यह सम्पत्ति स्थिर है, यही इस का सब से बड़ा गुण है। इसी स्थिरता की वजह से मुसीबत- जैसे युद्ध के समय जहां दूसरी सम्पत्तियाँ पारर पंख चीन वाली होती हैं, वहां यह सम्पत्ति कामधेनु का काम करती है। यूरोपीय महायुद्ध के बाद जर्मनी के डबल (Double) बाज़ार का नज़ारा भी हमारी आँखों के सामने चक्कर काट रहा है; लेकिन इसकी ओर भूमिपतियों या ज़मींदारों की क्या हालत थी उस की भी हमें याद आती है। राष्ट्र पर कोई विपत्ति पड़े, देखिए फिर ज़मींदारों के ख़ज़ाने! इसी आर्थिक लाभ की ख़ातिर किसी भी राष्ट्र में विषमता का बाज़ार भी खूब गर्म रहता है। भूमि से उत्पन्न विषमता से यह आशा करना कि लोकवाद (Democracy) पनप सकेगा दुराशा मात्र है। भूमि-सम्पत्ति इतनी महत्त्वपूर्ण है कि, यदि एक स्वर में यह कह दिया जाय कि इस पर स्टेट का आधिपत्य हो जाय तो अनुचित न होगा।

आज भारतवर्ष के एक कोने

से आवाज़ उठी है, सम्पूर्ण भारत की भूमि स्टेट के अधीन हो जानी चाहिए। राष्ट्रीय-सरकार का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वह भूमि पर अपना स्वाधिपत्य स्थापित कर ले। व्यक्तियों का भूमि पर से अधिकार उठ जाना-चाहिए। अब तक भूमि पर व्यक्तियों का हक़ स्वीकार किया जाता था। यह व्यक्ति ज़मींदार कहे जाते थे। इन से भारत साम्राज्य को लाभ हुआ है या हानि इस बात को भावी भारत वर्ष का पिछला इतिहास ही देगा। किसानों पर इन लोगों ने जो अत्याचार किए, वह भुलाए भी नहीं भूले जा सकते। इस लिए कम से कम कथित ज़मींदारों का तो भूमि पर से अधिकार उठा देना चाहिए। राष्ट्र प्रतिनिधि सभा में सा[illegible]क-दल इसी आवाज़ के साथ अपनी आवाज़ मिलाएगा। उस का भी यही ऐलान होगा कि ज़मीन पर से व्यक्तियों का अधिकार उठा दिया जाए। वह ज़मींदार प्रथा का समूलोन्मूलन कर देगा- और भूमि पर स्टेट का आधिपत्य कायम करेगा। वह किसानों पर किए जाने वाले अत्याचारों को एक दम बन्द करेगा।

ज़मींदार और बड़े २ तालुकेदार इस पर तिलमिलाएंगे ज़रूर। उन का अपनी बाप दादाओं से चली आ रही सम्पत्ति को एकाएक छोड़ने को जी न चाहेगा। वह अपने धर्मशास्त्रों की आड़ लिए, अपने स्वत्व को कायम रखने का प्रयत्न करेंगे। उन का कहना होगा कि, स्टेट को वैयक्तिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। इस से उन के धर्म की हानि होती है। धर्म ज़मींदारों और ताल्लुकेदारों को आदेश देता है कि 'उभया हस्तया आगमर' [illegible] हाथों से खूब कमा- और फिर उस का दान कर। स्टेट अगर भूमि पर अपना स्वत्व कायम करेगी तो यह परम्परा से चली आ रही दान की प्रथा काफ़ूर हो जाएगी। धर्म उन्हें सिखाता है कि मृत्यु के बाद पिता की सम्पत्ति का अधिकारी उस का पुत्र होता है। स्टेट जब अपना आधिपत्य स्थापित कर लेगी तब यह उत्तराधिकार की प्रथा स्वाहा हो जाएगी। इस लिए धर्म का विध्वंस न हो जाए, बड़े ज़मींदार और ताल्लुकेदार इस का विरोध करेंगे। वे हर बार प्राचीन इतिहास

के पत्ते खोल खोल दिखायेंगे कि आज तक कभी भी भारत-सरकार ने इस बात का दावा नहीं किया कि, सम्पत्ति पर और ख़ास कर भूमि पर किसी का आधिपत्य नहीं रहेगा।

लेकिन दूसरी ओर इस सरकार के सामने जो मद-माई हैं, उन का कहना ज़मींदार और उन के धर्मशास्त्री क्या बतायेंगे, यही अब तक भी ज्ञात नहीं हो सका है। धर्मशास्त्र ने हिन्दू और मुसलमानों को इजाज़त दी कि वे अपनी वैयक्तिक सम्पत्ति का पूरी तरह से उपभोग करें। उन्हों ने किया और खूब किया। उस से जो हानियां उत्पन्न हो गई हैं, ज़मींदारों और विशेष कर धर्मशास्त्रियों के पास उन के लिए इलाज कौन सा है। क्या वे चाहते हैं कि वर्तमान प्रणाली को जो भी ख़ल के किसानों का और भी अधिक तक खून चूसा जाय? यदि हां, तो राष्ट्रीय सरकार इस को सहन करने के लिए तैयार नहीं। वह सम्पूर्ण भारत राष्ट्र को स्वस्थ देखना चाहती है। वह भारत शरीर को अंग-विहीन नहीं देखना चाहती। किसान भारत के अंग हैं। राष्ट्रीयता और मानवीयता की दृष्टि से उन्हें भी वे अधिकार मिलने चाहिएं, जो कि अब तक ज़मींदारों और ताल्लुकेदारों को रहे हैं। इस में हिन्दुओं और मुसलमानों के धर्मशास्त्रों में भी बाधा न आनी थी। धर्मशास्त्र कब कहते हैं कि दुखियों को दुःख देकर कमाना धर्म विरुद्ध है? संसार को सुखी बनाना ही धर्म का काम है। अगर हिन्दू-धर्म भारतीय समाज-संगठन में कोई ऐसा दोष या अस्थिरता है, जो कि राष्ट्र की दृष्टि से हानिप्रद है, तो राष्ट्रीय सरकार उस की अवहेलना भी कर सकती है। राष्ट्रीय सरकार समझती है कि धर्म का इन मामलों में दखल देना सर्वथा अनुचित है। धर्म और समाजशास्त्र का क्षेत्र भिन्न रहे। धर्म के मामलों में समाजशास्त्र हस्तक्षेप नहीं कर सकता और समाजशास्त्र के मामलों में धर्म। लेकिन जब इतिहास ही बताता है कि धर्म

ने एक बार नहीं अनेकों बार अपनी अधिकार सीमा का उल्लंघन किया है। इसलिए अब राष्ट्रीय-सरकार धर्म को अपने क्षेत्र तक सीमित रहने को बाधित करेगी।

राष्ट्रीय-सरकार जब यह कहती है कि- भूमि पर स्टेट का अधिकार हो जाय तो यह समझना सरासर गलती होगी कि, स्टेट धर्मशास्त्र सम्मत उत्तराधिकार के विषय में हस्तक्षेप कर रही है। स्टेट का प्रहार उत्तराधिकार पर नहीं है- उस का प्रहार तो उस पर जिस के कारण उत्तराधिकार का जन्म हुआ है। यदि भूमि वैयक्तिक कब्जे में न रहेगी तो उत्तराधिकार अपने आप नष्ट हो जायगा इस को उड़ाना स्टेट का उद्देश्य नहीं, उस का उद्देश्य तो भूमि पर से वैयक्तिक अधिकार को उड़ाना है।

यह कहना भी सरासर गलती होगी कि, भारतवर्ष का अब तक का इतिहास भूमि पर वैयक्तिक अधिकार को स्वीकृत करता है। भूमि एक व्यक्ति विशेष की न होती है- चाहे वह उस पर स्वयं खेती करे या न करे, ऐसा भारत के प्राचीन इतिहास में और प्राचीन भारत के साहित्य में कहीं भी उपलब्ध नहीं होता। प्राचीन-भारतीय साहित्य में यह स्पष्ट उल्लेख पाया जाता है कि भूमि पर उसी का स्वत्व होना चाहिए जिस ने स्वयं कृषि करनी हो। राष्ट्रीय सरकार भी इसी बात से सहमति रखती है। उस का भी यह कहना होगा कि भूमि पर सम्पूर्ण राष्ट्र का जीवन निर्भर है- इस लिए वह ऐसी कोशिश करेगी, कि ज़मीन उन्हीं को जोतने के लिए दी जाय जिन का पेशा ही खेती करना हो। जो लोग ज़मींदार होंगे, उन का कर्तव्य होगा कि वे अपने हाथों से ही अपनी ज़मीन को जोतें। अगर उन की सन्तान भी यही काम करना चाहेगी तो उन्हें भी वह ज़मीन दे दी जायगी। इस पर भी वह सम्पत्ति उन की निजू नहीं समझी जायगी। [illegible] वह उस को बेच न सकेगा, न रहन कर सकेगा और न ही अपने नौकरों द्वारा ज़मीन पर खेती करा सकेगा। जो मेहनत करेगा सो ही पायेगा। हरामखोरी का अन्त होगा। भारत राष्ट्र का मेन लिंक स्टेट के हाथ में रहेगा। जब चाहेगी उन से काम लेगी तथा भारतराष्ट्र की भलाई को अपने सामने रखेगी।

सम्पादकीय-टिप्पणियां.

साम्यवादी-दल

(गतांक से आगे)

साम्यवादी दल इतने वेग से सफ़र तय करना चाहती है, हमें सन्देह है कि वह उद्दिष्ट स्थान पर पहुँच भी सकेगी कि नहीं। हमें तो उस के फिसलने का डर रहता है। क्यों कि परिस्थितियाँ उस के अनुकूल नहीं। उस का मार्ग साफ़ नहीं। बड़ी २ आँधियाँ उस के मार्ग में रुकावट रूप हैं- लेकिन साम्यवादी दल फिर भी शेर की तरह सीधा जाना चाहता है।

उसे मालूम नहीं कि भारतवर्ष किन परिस्थितियों में विद्यमान है। उस ने तो रूस को अपना आदर्श बना रखा है। उसे मालूम है यदि रूस एक दम राष्ट्रीय सम्पत्ति का राष्ट्री-करण कर सकता है तो भारतीय साम्यवादी दल वैसा क्यों न कर सकेगा। अगर रूस में यह ताकत थी कि वह ज़ारशाही के अवशेष ज़मींदारों को अपनी ज़मीनों से और पूँजीपतियों को अपनी जागीरों से उखाड़ फैंक सकता था तो साम्यवादी दल में वह ताकत कैसे नहीं हो सकती? वह भी रूस के पदचिह्नों पर चलता हुआ भारत को रूस का अनुगामी क्यों नहीं बना सकता?

आत्मविश्वास होना बहुत अच्छी चीज़ है। परन्तु आत्मवञ्चना कैसे भी हृदय के वचनों की परीक्षा करनी चाहिए। अपने आप को जब धोखा हो जाय, तो समझना चाहिए कि कहीं पतन होने लगा है। साम्यवादी दल की ठीक यही अवस्था है। उसे मस्त धोखा है कि उस की शक्ति इतनी हो गई है कि वह एक दम भारतवर्ष को नवीन ढंग से रंग देगा। उस का भारत की परिस्थिति को रूस की परिस्थिति से मिलाना बड़ी ज़बर्दस्त ग़लती है। रूस ने ज़ारशाही का अन्त किया, पूँजीवाद का अंत किया और अंत किया उन बुराइयों का जो उसे घुन की तरह भीतर से खोखला कर रही थीं। ~~लेकिन~~ रूस ने अपने अन्दर शक्ति का संचय किया। कब और किन परिस्थितियों में?

(शेष फिर)

आंधी के प्रतिफल.

लेखक - ब्र. बाल कृष्ण

यह स्वीकार भी कर लिया जाए कि भूमि पर राज्य का ही अधिकार स्थापित किया जाना चाहिए। तो भी समस्या यह है वर्तमान समय में जिन व्यक्तियों के भूमि पर स्वत्वाधिकार पैदा हो गए हैं, उन से भूमि को किस प्रकार ग्रहण किया जाए। यह समस्या अत्यन्त जटिल है, इस का सामना बहुत बुद्धिमत्ता तथा दूरदर्शिता से करना चाहिए। संसार में इतने महत्वपूर्ण परिवर्तन क्रान्ति के बिना कहीं नहीं हुए। रूस में परम्परागत पूंजीवाद पर आश्रित समाज व्यवस्था को बदलने के लिए बहुत रक्तपात हुआ। रक्तपात के कुछ मात्रा तक कम हो जाने पर भी रूस एकदम साम्यवाद के उत्कृष्ट स्वप्नों को पूरा नहीं सका। युद्ध तथा क्रान्ति के कारण रूस को बहुत आर्थिक क्षति पहुंची थी, उस क्षति को पूरा करना सरल कार्य नहीं था, इसके अतिरिक्त यह कार्य नवीन आदर्शों के आधार पर नवीन समाज व्यवस्था को स्थापित करने की अभिलाषा के कारण और भी अधिक कठिन हो गया था। देश को इस प्रकार की विनाशकारी अवस्थाओं से सुरक्षित निकाल ले जाने के लिए रूस के साम्यवादी राजनीतिज्ञों ने भी अपने साम्यवाद के आदर्शों को कुछ समय के लिए ताक में धर दिया और नवीन आर्थिक योजना (New Economic Policy - Nep) स्वीकार की। जिस का आधार वैयक्तिक सम्पत्ति हो कर विदेशियों को अपनी पूंजी लगा कर रूस में अपने व्यवसायों के चलाने की आज्ञा प्रदान की गई। किसानों को भूमि पर स्वत्व दे दिए गए। इस से रूस की आर्थिक दशा सुधरने लगी। सरकार को इस प्रकार [illegible]

को प्रोत्साहन देने वाले कार्यों को देख कर उग्रसाम्यवादियों ने विद्रोह का झण्डा खड़ा किया। परन्तु सरकार ने सोचा कि यदि अभी साम्यवादी नीति का पूर्णरूप से आश्रय लिया जाएगा तो देश में पुनः आर्थिक अव्यवस्था हो जाएगी। अतः अभी इस प्रकार की प्रवृत्तियों को रोकना चाहिए। इस लिए सरकार ने उग्रसाम्यवादियों के नेता 'ट्राटस्की' को देश निकाला दे दिया गया और इस दल के अन्य व्यक्तियों को भी सरकारी पदों से पृथक् कर दिया।

पूंजीवाद को कुछ अंश में प्रविष्ट करने और साम्यवादियों को दण्ड देने से सरकार का उद्देश्य प्राचीन व्यवस्था को कायम करना न था, अपितु मानव स्वभाव की स्थिरता तथा अपरिवर्तनशीलता को दृष्टिगत यह आवश्यक था कि धीरे २, जो लोग पीछे रह गए हैं उन्हें भी साथ लेते हुए, आगे बढ़ा जाए, अन्यथा अभिलषित उद्देश्यों पर पहुंच सकना स्वप्न मात्र ही रह जाता। इस प्रकार कुछ वर्षों तक प्राचीन समाज व्यवस्था को कायम रखते हुए रूस की साम्यवादी सरकार ने अपनी शक्ति स्थिर प्राप्त कर ली, देश की आर्थिक अवस्था को भी कुछ उन्नत कर लिया तब धीरे २ पुनः अपनी साम्यवादी नीति का चक्र चलाना शुरू किया। इस अर्से में सरकार ने लोगों को नवीन समाज व्यवस्था को स्वीकार करने के लिए शिक्षा आदि द्वारा तय्यार किया। रूस की साम्यवाद की दिशा में अधिकाधिक सफलता का रहस्य उस की धैर्यता तथा दूरदर्शिता पूर्ण नीति में निहित हो तो हमें भी भारत में स्थानीय व प्रान्तीय सर्व विशेष परिस्थितियों को मद्दे नज़र रखते हुए ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिस से देश की आर्थिक और राजनीतिक स्थिति

किसी प्रकार से उत्पन्न हो सके। राष्ट्रीय सरकार इस दिशा में प्रयत्न कर रही है जो शायद कुछ दिनों में कार्यरूप में भी परिणत होना शुरू हो जायगा।

भूमि पर व्यक्तियों के विविध प्रकार के स्वामित्व कायम हो गए हैं वे अन्यायपूर्ण तथा अनुचित हैं। उन को किसी प्रकार से नैतिक भित्ति पर स्थापना नहीं की जा सकती। परन्तु उन को सरकार किस प्रकार अपने हस्तगत कर सकती है, इसके लिए निम्न उपाय हो सकते हैं

(i) एक कानून द्वारा सरकार स्वत्वाधिकारियों के सर्व विध अधिकारों को नियम विरुद्ध घोषित कर दे। भूमि को अपने ही नियन्त्रण में ले आए।

(ii) स्वत्वाधिकारियों को उन के अधिकारों का पूरा मूल्य दे कर सरकार उन से उनके अधिकारों को खरीद ले।

(iii) स्वत्वाधिकारियों को उन के अधिकारों का उचित प्रतिफल देकर सरकार उन से उन के अधिकारों को छीन ले।

(iv) इस प्रकार का कानून बना दिया जाए कि कोई व्यक्ति अपने परिवार के जीवन निर्वाह योग्य भूमि से अतिरिक्त भूमि नहीं रख सकता, किसी को ठेके पर नहीं दे सकता, और न वेतनभोगी श्रमियों द्वारा ही खेती करा सकता है। इस नियम से जिन के पास उचित मात्रा से अधिक भूमि हो वे या तो भूमि को छोड़ दें या किसी को बेच दें।

इन चारों विकल्पों में कौन सा विकल्प अधिक क्रियात्मक तथा जनता और राज्य दोनों ही दृष्टि से अधिक उपयोगी और अत एव अधिक वाञ्छनीय है। उग्र साम्यवादी प्रथम विकल्प को ही पसन्द करते हैं, परन्तु मैं इसे पहले कह चुका हूँ; कि इस प्रकार एकदम भूमि सम्बन्धी अधिकारों को विनष्ट कर देना अदूरदर्शिता पूर्ण कार्य है। राजनीति के क्षेत्र में एक ऐसी भूल (Blunder) है जिस के भविष्य में होने वाले दुष्परिणामों की कल्पना ही नहीं की जा सकती। मेरी सम्मति में कोई भी बुद्धिमान सरकार इस प्रकार के उपायों का अवलम्बन करने को तय्यार न होगी।

द्वितीय विकल्प, प्रथम विकल्प से इस दृष्टि से अधिक अच्छा है कि इसके अवलम्बन करने से असन्तोष की ज्वाला उतनी तीव्रता से पैदा न होगी। जितनी प्रथम विकल्प के अवलम्बन से सम्भावित है। परन्तु इस गुण की अपेक्षा इसमें दोष अधिक हैं।

(i) अधिकारों का पूर्ण मूल्य देने का अभिप्राय है कि हम अधिकारों को पूर्ण रूपेण न्याय्य समझते हैं। इसलिए ही हम समझते हैं जब तक उन अधिकारों का पूर्ण मूल्य नहीं चुकाया गया तब तक व्यक्तिगत कुछ अधिकार अवशिष्ट है। और यदि वस्तुतः यह बात ठीक है तो सरकार का व्यक्तियों के अधिकारों को छीन कर अपने हाथ में लेने का क्या प्रयोजन?

(ii) यदि स्वत्वाधिकारियों का पूर्ण मूल्य चुकाया जाए तो बहुत से व्यक्ति जिन्हें अधिकारों की कीमत लाखों रुपए है, वे बिना किसी विशेष प्रकार की परिश्रम किए इतनी अधिक सम्पत्ति के स्वामी बन जायेंगे। और इससे समाज में आर्थिक विषमता बहुत बढ़ जायगी। जो सामाजिक उन्नति की दृष्टि से किसी प्रकार भी वाञ्छनीय नहीं हो सकती।

(iii) यदि सरकार पूर्ण मूल्य द्वारा भूमि पर स्थापित स्वत्वाधिकारों को खरीदेगी तो बहुत अधिक आर्थिक बोझ से दब जायेगी। कि इस कारण यह नवीन व्यवस्था सर्वथा अनुपयोगी सिद्ध होगी

तृतीय विकल्प ही इन सब विकल्पों में अधिक उपयोगी तथा क्रियात्मक है। साक्षिप्त सरकार के प्रस्ताव के अनुसार १५००) व इससे कम जिन के स्वत्वाधिकारों के मूल्य होंगे, उन को, उन के अधिकारों का पूरा मूल्य दिया जायेगा। परन्तु इस से अधिक मूल्य वाले स्वत्वाधिकारों के लिए आंशिक प्रतिफल दिया जायेगा। इस विकल्प के अवलम्बन से पहले दो विकल्पों से जो दोष सम्भावित थे, वे नहीं हो सकेंगे।

बड़ी २ जागीरें वालों को आंशिक प्रतिफल देने से विषमता इतनी उग्र रूप में न रहेगी, जितनी उग्र रूप में यह आज कल विद्यमान है। और जिन व्यक्तियों के स्वत्वाधिकार १५००) व इस से कम हैं उन को पूरा मूल्य दे देने से कृषि की दृष्टि से बहुत लाभ होगा। क्यों कि इस से साधारण किसान और अन्य भूमि पर कार्य करने वालों को भूमि पर लगाने के लिए कुछ पूंजी मिल जाएगी।

इस व्यवस्था से बड़े २ जागीरदारों में तो असन्तोष कुछ न कुछ मात्रा में अवश्य फैलेगा, परन्तु सामान्य कृषक-जिन की संख्या जागीरदारों से बहुत अधिक है, इस का हृदय से स्वागत करेंगे। इस उपाय के अवलम्बन से इस प्रकार: कृषकों की अवस्था को उन्नत कर सकेंगे। बड़े २ जमींदार और जागीरदार अवश्य इस का विरोध करेंगे, परन्तु सब कृषक हमारे साथ होंगे, तो उन के इस प्रकार के विरोध का कोई महत्व न रहेगा। कृषकों की अवस्था को सुधारने का स्वर्णावसर समान उपाय यही है। इसी लिये सरकार इस का अवलम्बन करना चाहती है। सब प्रतिनिधि समर्थक विद्वान सिद्धान्त इस

उपयोगिता को समझेंगे और सरकार भी इस प्रकार से सहायता करेगी, जिस से यह विधान सफल हो सके। और हम भारतीय सामान्य जनता के हितों की रक्षा करते हुए अपनी वर्तमान शोचनीय अवस्था में कुछ सुधार कर सकें।

चतुर्थ विकल्प भी बहुत उपयोगी नहीं है, क्योंकि बड़े २ जागीरों वालों को ऐसे खरीदार मिलना मुश्किल है जो स्वयं भी खेती करने को समर्थ हों और रुपया चुकाने की भी सामर्थ्य रखते हों। ऐसी अवस्था में उन्हें बाधित हो कर भूमि छोड़नी ही पड़ेगी। इस से असन्तोष बहुत बढ़ जायगा। इस कारण से ही हमने प्रथम विकल्प को छोड़ा था।

इस प्रकार राष्ट्रीयकरण के उपायों पर विचार करते हुए हम इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि जिन के स्वामित्व बहुत अधिक हैं उन्हें उचित प्रतिफल दे कर ले लेना चाहिए और जिन के स्वामित्व इस से कम के स्वामित्व हैं उन्हें पूरा मूल्य दे देना चाहिए। यही हो सर्वोत्तम उपाय है।

गुरुकुल १५
दिनों दिन

गुरुकुल —

दिनों दिन.

— ब्र. रविशंकर जी को मुजफ्फरनगर में कास्का जरूरत अदालत की जा रही थी। उन्हें कल मंदिर की गाड़ी से भेज दिया गया।
— आज ७ तारीख मुजफ्फरनगर की डाक नहीं आई-'राष्ट्र-वाणी' के प्रेमी पाठक कल तक इन्तज़ार करें।
— ब्र. गुरुदेव औड्र के काम से सहारनपुर गए थे। वे रात को ही वापिस लौट आए।
— आयुर्वेद-परिषद की प्राचीन परिपाटी के अनुसार ५ तारीख को जिन महानुभाव का "Medical Ethics" विषय पर व्याख्यान होना था, वह किन्हीं विशेष कारणों से न हो सका।
— श्रद्धानन्द-सप्ताह के दिनों कालेज प्रतिपन की तरफ से इंग्लिश में स्वामी श्रद्धानन्द पर निबन्ध लिखने के लिए एक प्रतियोगिता सम्मेलन की आयोजना की गई है। गुरुकुल के इतिहास में यह एक दम नवीन बात होगी यदि हो गई इस के लिए तो और होगा भी।
— ब्र. वेदप्रकाश की चिट्ठी से ज्ञात हुआ कि वे अमृतसर से एक टीम लाने की कोशिश कर रहे हैं।
— कल रात को ८ बजे महाविद्यालय वाग्वर्धिनी सभा की ओर से श्री. पं. रामगोपाल जी वि.अ. का "पत्रकार कला" इस विषय पर मनोरंजनापूर्ण व्याख्यान हुआ। उपस्थिति सन्तोषजनक थी।
— कल शनिवार है, सभा दिवस है। संस्कृत सभाओं के मंत्री नोट कर लें और वक्ताओं को सूचना दे दें।
— श्री प्रो. सत्यव्रत जी सि. अ. निजि काम से बाहिर गए हुए हैं। २३ तारीख तक वापिस आ जाँयगे।
— इस बार श्रद्धानन्द सप्ताह के दिनों और सर्दियों में "राजहंस" मानसरोवर से उतरेगा।
— वाग्वर्धिनी सभा के जन्मोत्सव के लिए सभापति किसे बनाया जाए, इस पर विचार किया जा रहा है।

आइए -

खुशी से आइए !!

गुरुकुल हॉकी दल, -व-विभाग के मुखिया जी की ओर से उन सब भाइयों को मुक्त निमन्त्रण है, जिन्हें बड़े मैदान में खेलना नहीं मिल रहा।

आइए !
और
खुशी से आइए !!

(बेतार की तार से) - सत्यपाल

(८२)

२८५ - वाणी -

७५

अंक ५	राष्ट्रीय-दल का मुख पत्र सम्पादक शिव कुमार	वर्ष १

सहसा न क्रिया करो कभी,
अविवेकी जन को है सुख कहां !
करता नर जो विचार के,
उस के पद चूमती रमा ॥

"कश्चित"

\+ + +

कोई भी क्रान्ति तब तक रचनात्मक काम नहीं कर सकती, जब तक कि उस पर पहिले से पूर्ण विचार न कर लिया जाय।

"वेल्स"

छपते - छपते

— हमारे सौभाग्य का विषय है कि, Government Gardens - टीम ~~ने टूर्ना~~ सहारनपुर ने क्रिकेट-हॉकी टूर्नामेन्ट में शामिल होना स्वीकार कर लिया है। इस टीम के मुखिया जी की ओर से श्री होशमंत्री जी को आशा दिलाई गई है कि शायद वे अपने साथ एक दूसरी टीम को लाने का प्रयत्न करेंगे।

(आगामी डाक से प्राप्त)

— आज रात को 6 बजे श्री. पं. रामगोपाल जी विद्यालंकार का "पत्रकार कला" इस विषय पर दूसरा व्याख्यान होगा।

राष्ट्र - वाणी

८।१२।३४

आंशिक - प्रतिफल !

भूमि पर स्टेट का आधिपत्य स्थापित हो जाना चाहिए, इस को स्वीकृत कर लेने के बाद सवाल यह उठता है — जिन लोगों का भूमि पर वर्तमान समय स्वत्व कायम है उन को ज़मीन से बेदख़ल कैसे किया जाय? समस्या बड़ी जटिल है। इस लिए समाजशास्त्रियों ने इस पर खूब विचार किया है। हम ने सोचना है - भारतवर्ष के लिए कौन सी विधि उपयोगी रहेगी।

समाजशास्त्रियों के विचार के अनुसार स्टेट सब से पहिला उपाय यह कर सकती है कि कानून बना कर ज़मींदारों को उन की ज़मीन से एकदम बेदख़ल कर दे, या ज़मींदारों को उन की ज़मीन का वास्तविक मूल्य देकर ख़रीद सकती है; और नहीं तो ज़मींदार को उस की ज़मीन का आंशिक प्रतिफल देकर उसे ज़मीन से बेदख़ल कर सकती है।

भारतवर्ष के लिए, जब कि यहां की स्टेट भूमि पर अपना स्वाधिकार स्थापित करेगी, कौन सा मार्ग श्रेष्ठ होगा, इस बात पर विचार करते हुए यह तो ठीक तरह से कहा जा सकता है कि पहिला उपाय किसी भी हालत में काम में नहीं लाया जा सकेगा। यह इस लिए कि भारतवर्ष की परिस्थितियां उस के अनुकूल नहीं; और न ही अब तक संसार की किसी स्टेट ने इस को अपनाया है। रूस ही एक ऐसा अपवाद है जिस ने इस विधि को कार्य रूप में परिणत किया। इस का अभिप्राय यह नहीं कि भारत भी उस का अनुसरण करे। रूस जिस परिस्थिति में था भारत उस परिस्थिति में नहीं है। सब से मोटी बात जो रूस के सम्बन्ध में कही जा सकती है- वह यह कि रूस की सर्वसाधारण जनता इस उपाय को लागू करने के लिए तैयार थी। यूरोपीय-महायुद्ध की चपत ने रूस की जनता में जो जागृति उत्पन्न की उस की अवहेलना नहीं की जा सकती। किसी भी राष्ट्र की जनता की उपेक्षा सदा हुआ करे, इस से कोई क्रान्ति उत्पन्न नहीं हो सकती। फ्रांस की राज्य क्रान्ति हुई इस लिए नहीं कि सर्वसाधारण की उपेक्षा की- परन्तु इस लिए, क्रान्ति ██ को प्रगट कर देने के लिए एक तात्कालिक कारण - थर्ड-ऐस्टेट का अधिवेशन — आ उपस्थित हुआ। रूस में भी वह यह तात्कालिक कारण यूरोपीय महायुद्ध के रूप में प्रकट हो चुका था। इस लिए वहां पर क्रान्ति की ज्वाला ~~सम्पूर्ण रूप~~ बड़े वेग से फैल सकी। रूस ने इसी लिए अपने राष्ट्र और आत्म मान दोनों मानु[illegible]

का बड़ी वीरता से सामना किया। वह विजयी हुआ। परन्तु भारतवर्ष की वह अवस्था नहीं। भारतीय लोकमत अभी जागा नहीं। वह रूस के चरणचिह्नों पर चलने के लिए पंगु है। उस के अन्दर न अभी स्फूर्ति है और न ही कोई आकांक्षा। वह पार्टियों के तरीके ले रहा है। उस में यह आशा करना - वह स्टेट की सहायता करेगा दुराशा मात्र है। लेकिन नवीन भारत स्टेट - या राष्ट्रिय सरकार भारत जनता को जगा रही अवश्य। पर प्रथम उपाय तो किसी भी अवस्था में स्वीकार नहीं किया जा सकता।

तो फिर दूसरे उपाय का ही पल्ला पकड़ा जाय? क्या ज़मींदारों को उन की ज़मीन का वास्तविक मूल्य दे कर ज़मीन खरीद ली जाय? वर्तमान समय में जब भारत सरकार को रेलवे आदि के लिए ज़मीन की ज़रूरत होती है तो वह ज़मींदार से खरीद लेती है, क्या राष्ट्रिय सरकार भी वैसे करे? हम समझते हैं नहीं और कभी नहीं! यह इस लिए कि ऐसा करना स्टेट के मूलभूत सिद्धान्त के प्रतिकूल होगा। स्टेट सम्पत्ति पर व्यक्ति के अधिकार को स्वीकृत नहीं करती - और अब यदि वह ज़मींदारों को उन की ज़मीन का दाम अदा करती है, तो वह स्वयं ऐसी श्रेणी को उत्पन्न करेगी जो भविष्य में तब उस पर मौज किया करेगी। वह निष्कर्मण्य हो कर हरामखोरी किया करेगी। और राष्ट्रिय सरकार को किसी भी हालत में यह अभीष्ट नहीं हो सकता। इस के अतिरिक्त इस उपाय का सहारा लेने में सब से बड़ी दिक्कत यह है कि - ज़मीन का दाम किस प्रकार से कूता जाय? ज़मींदार तो अपनी ज़मीन की कीमत मनमानी बोल सकता है - उस के अनुसार ही अगर स्टेट कर दे, उसे बेवकूफ ही समझा जायगा अक्लमन्द नहीं। इस लिए इस उपाय का अवलम्बन भी उचित न होगा।

परिणामतः तीसरा उपाय ही भारत के लिए अधिक उपयोगी रहेगा। अर्थात् स्टेट ज़मींदारों को आंशिक प्रतिफल दे कर ज़मीन पर अपना स्वत्व स्थापित करे। आंशिक प्रतिफल देने का मतलब यह है कि, जिस समय स्टेट राष्ट्र की भूमि को अपने हाथों में लेने लगी है, उस से नियत समय पूर्व जो इन्कम होती रही है, वही और उस की ज़िन्दगी तक दी जाती रहे। कल्पना कीजिए अगर एक आदमी को अपनी ज़मीन से, स्टेट के कब्ज़ा कर लेने से पूर्व, 500) इन्कम होती

थी - तो राष्ट्रीय सरकार ऐसा प्रबन्ध करेगी कि जब तक वह ज़िन्दा रहे तब तक उसे ज़मीन की इतनी राशि दी जा रही। स्टेट उस राशि को किश्तों में चुकायेगी। उस की मृत्यु के बाद उस की सन्तान उस राशि की अधिकारी नहीं समझी जायगी।

उत्तराधिकार का विरोध करते हुए भी, अवस्थाओं से बाधित हो कर राष्ट्रीय सरकार इस में अपवाद कर सकती है। कल्पना कीजिए कि स्टेट ने एक ज़मींदार को १० साल के लिए उस की ज़मीन का दाम चुकाते रहने का वचन दिया है, लेकिन हो सकता है १० साल समाप्त होने से पूर्व ८ साल में ही अगर उस की अकाल मृत्यु हो जाय, तो क्या उस समय स्टेट उस के अनाथ बच्चों और विधवा स्त्री को यों ही छोड़ दे? कम से कम इन्सानियत और न्याय की दृष्टि से अनाथ बच्चों और विधवा स्त्री को उस के दातव्य से महरूम रखना उचित न होगा। वर्तमान समय में प्रचलित कानून (Law) की एक दम अवहेलना करना दूरदर्शिता का काम नहीं। परिवर्तन होना चाहिए, लेकिन [illegible] है। मानवसमाज अनन्त काल से अनुसार, आपरिवर्तनशील पर कानूनविहित रहा है। कोई भी परिवर्तन एक दम नहीं लाया जा सकता। मानवस्वभाव ही इसी किसम का बना हुआ है। इस लिए बुद्धिमत्ता से काम लेना ठीक होगा - इस लिए कुछ अंशों में और अवस्थानुसार यदि उत्तराधिकार को स्वीकार कर लिया जाय तो अनुचित न होगा।

इस तीसरे उपाय को हाथ में लेने में स्टेट को पर्याप्त मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा - ऐसा इस के विरोधियों का कहना है। सब से पहिले प्रश्न यह उठता है कि स्टेट ज़मींदारों को देने के लिए दाम कहां से? क्या यह उधार ले ले? कहना पड़ेगा नहीं। कर्ज़ बुरी बला है। इस से अच्छा तो ज़मीन पर व्यक्ति का अधिकार स्वीकार कर लिया जाता। फिर स्टेट ज़मींदारों का दातव्य कैसे चुकाए? इस का सीधा सा तरीका यह है कि, स्टेट को किसानों से वार्षिक कर या लगान प्राप्त होगा उस को एक नियत राशि अदा कर दी जाय। इस

से नवीन परिवर्तन करते हुए ज़मींदारों को असन्तोष नहीं होगा। वे खुशी से इसे स्वीकार करेंगे - और ज्यों २ समय गुज़रता जायगा त्यों २ भारत की सारी ज़मीन राष्ट्रीय-सरकार के हाथ में आती जायगी। इस प्रकार व्यक्ति विशेष का ज़मीन पर से आधिपत्य उठ जायगा। गुरुकुलीय राष्ट्र प्रतिनिधि सभा में राष्ट्रीय दल इसी नीति की घोषणा करेगा।

सम्पादकीय - टिप्पणियां.

साम्यवादी-दल.

(गतांक से आगे)

इस बात को जानने के लिए रूस की राज्य क्रान्ति के इतिहास का सिंहावलोकन कीजिए। रूस ज़ारशाही के कारनामों से तंग हुआ था। ज़मींदारों और पूंजीपतियों के नरकों से जला भुना बैठा था। यूरोपीय महायुद्ध ने इस आग को बढ़ाने में धधकती हुई आग में घी का सा काम किया। लेनिन की सिंहगर्जना ने रूस की मनोवृत्ति को संसार के सन्मुख रखा। साम्यवाद की विजय वैजयन्ती ज़ारशाही दरबारों पर फहराने लगी। कुरमल भी करी गए, बात में सम्पूर्ण रूस साम्यवादी नारों से गूंज उठा। लेनिन की विजय हुई और पुरानी प्रथाएं सहसा लुप्त हो गईं।

लेकिन क्रान्ति के बाद! इस काली मालाल अन्धेरी के बाद! रशियन नेताओं ने अपने आप को गाढ़ अन्धकार में पाया। उन्हों ने सोचा अब क्या किया जाय। उन के सामने कोई प्रोग्राम न था। इधर और रशियन जनता रोटी २ को चिल्ला रही थी। उसे कपड़ा चाहिए था और सब से बढ़ कर रहने को मकान चाहिए था जो कि बोल्शेविज़म ने उस से कहा था। परन्तु रशियन नेताओं और रशियन सरकार के पास साधन न थे। अब रशियन जनता के सामने लम्बे २ और प्रभावशाली व्याख्यान झाड़ने का समय न था। रशियन जनता कुछ ठोस काम चाहती थी। लेकिन वह समय भी स्वर्गीय था, संसार के लिए पथ प्रदर्शक था जब रशियन सरकार अपनी जनता के सामने मुंह बाए खड़ी थी और चिन्ता में डूबी हुई थी कि अब क्या किया जाय?

रूस ने किया, क्या किया?

वही जो लेनिन ने कहा था -

We must learn to

do business from capitalists."

अगर हमें व्यवसाय करना सीखना है तो पूंजीपतियों के पास जाना होगा। लेनिन ने यह शब्द शायद व्यवसाय को चलाने के लिए कहे होंगे लेकिन क्रान्ति के बाद रूस को पूंजीवाद के सामने घुटने टेकने पड़े। उस ने पूंजीवादी देशों से सन्धि की। ट्राट्स्की जैसे गरम दिमाग़ वालों ने इस का घोर विरोध किया। सोवियत सरकार ने उसे कान से पकड़कर रूस से बाहिर कर दिया। आज वह अपनी उग्र साम्यवादी नीति को बग़ल में दबा कर इधर उधर मारा मारा फिरता है। रूस में उस के लिए कोई स्थान नहीं। सोवियत सरकार ने 'नवीन-आर्थिक नीति' (New economic policy) को अपनाया। उन की भाषा में इसे Nep कहा जाता है। इस के अनुसार विदेशी पूंजीपतियों को रूस में बुलाया गया। उन्हें उन की वैयक्तिक पूंजी को रेल तार आदि कामों को पुनरुज्जीवित करने के लिए खपाने की आज्ञा दी गई। यह वही दिन था जिस दिन साम्यवाद को पूंजीवाद के चरण छूने पड़े थे। रूस ने थोड़े समय के लिए अपने आदर्शों से गिर कर उन्नति करनी चाही। और करना भी ऐसे ही चाहिए था।

इस सारी प्रक्रिया का संसार पर क्या असर हुआ? यही कि रूस की राज्यक्रान्ति जिस स्पिरिट (spirit) से हुई थी उसे तो अपना लेना चाहिए, लेकिन उस को कार्यरूप में परिणत करने के लिए जिस हथियार को उस ने पकड़ा था वह संसार के लिए कभी उपयोगी नहीं हो सकता। जिस प्रकार फ्रांस की राज्यक्रान्ति के सिद्धान्तों से सम्पूर्ण योरोप गूंज उठा था, और योरोप ने ठीक उन्हीं साधनों से- जिन का उपयोग फ्रांस ने किया था- उन सिद्धान्तों को अपने यहां स्थापित किया- रूस की राज्यक्रान्ति में यह बात न थी। योरोप के देशों ने इस बात को भली भांति समझ लिया कि पूंजीपतियों को मज़दूरों का खून नहीं चूसना चाहिए। अपने २ ढंग से प्रत्येक देश ने इसे बन्द भी किया, लेकिन किसी ने भी उन औज़ारों को हाथ में नहीं लिया; जिन्हें सोवियत जनता ने लिया था। फिर इस क्रान्ति के बाद जो रूस की हालत हुई उसे प्रसिद्ध ऐतिहासिक H. G.

Wells के शब्दों में यों कहा जा सकता है —

"A revolution can create nothing that has not been fully discussed, planned, thought out and explained beforehand."

अर्थात्—कोई भी राज्यक्रान्ति तब तक रचनात्मक काम नहीं कर सकती, जब तक उस पर पूरी तरह से विचार न कर लिया हो। हम समझते हैं रूस की राज्यक्रान्ति ने हमें यही सिखाया है कि किसी भी क्रान्ति से पूर्व उस के परिणामों पर अवश्य विचार कर लेना चाहिए। महर्षि कार्लमार्क्स ने साम्यवाद को जन्म दिया। उस को क्रिया में लाने का काम रूस ने किया, लेकिन वह असफल रहा। इस में महर्षि का कसूर नहीं। वह तक सिद्धान्त कायम वाला था— उस ने उस पर अच्छी खासी बहस की, उस पर लिखा और ऐसा लिखा कि विचारकों के दिमाग़ घूम उठे। उन की विद्वता का सिक्का आज भी विद्वानों के दिल में जमा हुआ है। परन्तु उस के अनुयायियों ने उस सिद्धान्त को अपनाने में बड़ी जल्दी की। उन्हों ने उस पर समय नहीं लगाया। बैठ कर सोचा नहीं - और कोई नक्शा भी नहीं बनाया। बस अंधाधुन्ध चल पड़े और अन्त में फिर वही निकला जो पानी रात। इसलिए दोष महर्षि के अनुयायियों का है- उन का नहीं।

ऐसी अवस्था में क्या भारतवर्ष का रूस के पद चिन्हों पर चलना उचित होगा? कहना पड़ेगा, नहीं। हमें रूस को सलाम तो भी कलाम करना चाहिए। हमें उस ओर न जा कर मौलिकता से विचार करना चाहिए, और अपना मार्ग अपने आप बनाना चाहिए। भारतीय दिमाग़ अभी दिवालिए नहीं हुए। वे अभी ऊसर नहीं हुए— क्योंकि उपजाऊ हैं। अच्छे से अच्छे और बहुत की परिस्थिति के अनुकूल उपाय अब भी सोचे जा सकते हैं। अभी से अपने आप को हीन समझने की आवश्यकता नहीं। वह भारत की नसों में अभी पुराना खून दौड़ रहा है- उसे काम कर लेने दो मत दौड़ो रूस के पीछे- और मत पकड़ो साम्यवादियों का पल्ला। राष्ट्रीय-दल मौलिक सोचेगा और ऐसा सोचेगा कि संसार देख रह जायगा।

भूमि व्यवस्था

(मतवेद में प्रकाशित)

लेखक- डा॰ बाल कृष्ण

आज कल सामाजिक संगठन बहुत जटिल होता जा रहा है। प्रत्येक व्यक्ति जो कार्य करता है, सारा समाज उस कार्य की उत्तमता के लिए उस व्यक्ति की ही दक्षता तथा चतुराई पर आश्रित होता है। और वह व्यक्ति भी अपने कार्य के अतिरिक्त अन्य सब अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज के अन्य व्यक्तियों पर आश्रित है। कोई व्यक्ति सब कार्यों को स्वयमेव करके समाज से सर्वथा स्वतन्त्र नहीं हो सकता। इस लिए किसी व्यक्ति का हित केवल अपने ही स्वार्थों की सिद्धि में नहीं है, अपितु सामाजिक हित की वृद्धि में भी ही सब व्यक्तियों का हित निहित है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप से दूसरों पर आश्रित है। इस लिए कोई व्यक्ति जब समाज में अपने कार्य को सच्ची लगन, सज्जनता तथा ईमानदारी से पूरा करेगा तो वह यह भी आशा करेगा कि दूसरे भी अपना कार्य इसी प्रकार ही करें। किसी मकान के निर्माण में केवल उस के तैयार करने वालों का स्वार्थ नहीं, अपितु उसका उपयोग करने वालों का भी स्वार्थ है। अगर कोई हलवाई अपनी मिठाइयों में लालच की दृष्टि से, या उन में बहुत कुछ मिलावट करता है, तो इस से बहुत से लोगों को हानि पहुंचने की सम्भावना है, इसी प्रकार अन्य खाद्य पदार्थों में भी अनावश्यक पदार्थों के सम्मिश्रण से समाज के स्वास्थ्य को नष्ट किया जा सकता है इस लिए सामाजिक हित की दृष्टि से यह आवश्यक है कि समाज किसी प्रकार से इन उत्पादन करने वालों पर नियन्त्रण रक्खे। मनुष्य स्वभाव बहुत निर्बल है वह अवसर मिलने पर सामाजिक हिताहित का विचार न करते हुए अपने तत्कालीन स्वार्थ को ही प्रधानता देता है। अतः यह आवश्यक है कि मनुष्य को स्वतन्त्रता का वहीं तक ही अवसर दिया जाए जहां तक वह औरों

हितों को किसी प्रकार हानि न पहुंचाए। इस सीमा का अतिक्रमण होने पर स्वतन्त्रता को सीमित कर देने में कोई आपत्ति न होनी चाहिए क्योंकि इस अवस्था बढ़ी हुई स्वतन्त्रता मानव समाज की व्यवस्था को विघटित ही करती है। वस्तुतः कुछ व्यक्तियों की इस प्रकार की स्वतन्त्रता या उच्छृंखलता छीन कर हम बहुत से अन्य व्यक्तियों की स्वतन्त्रता बचा ही देंगे। इस प्रकार हम स्वतन्त्रता के आवरण को काटके वास्तविक स्वतन्त्रता को ही प्राप्त कर रहे होंगे। अतः मेरी सम्मति में ऐसे उपायों का अवलम्बन अवश्य करना चाहिए जिन से उन व्यक्तियों की स्वतन्त्रता का अपहरण कर लिया जाए जो अपनी स्वतन्त्रता का दुरुपयोग दूसरों की स्वतन्त्रता छीनने में करते हैं। इसी लिए भूमीदारों, ताल्लुकेदारों और जागीरदारों के अनुचित तथा बहुत अधिक बढ़े हुए अधिकार सर्वथा अवाञ्छनीय हैं। वे अपने इन अधिकारों का प्रयोग किसानों के शोषण में करते हैं। कृषि की भूमि जोतने में जमींदारी प्रथा को मिटाना स्वतन्त्र दृष्टिकोण होता है वहां किसानों की दुर्गति भी नग्न रूप में दिखाई पड़ती है। अतः जमींदारों के अनुचित अधिकार किसी प्रकार भी वाञ्छनीय नहीं हैं। तथा इस के अतिरिक्त समान हक होना ही अपने भरण पोषण के लिए आवश्यक अन्न के लिए भूमि का अधिकार होगा। अन्न मानव समाज की प्रथम आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, अतः भूमि सम्बन्धी व्यवस्था का बहुत उन्नत होना सामाजिक हित की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है। अनाज के उत्पादन होने पर तथा अधिक

अधिक मात्रा में पैदा होने पर केवल पैदा करने वालों को लाभ नहीं बल्कि सारे समाज का ही लाभ है और इसी प्रकार इस के विपरीत तथा कम मात्रा में पैदा होने पर सारे समाज की ही हानि होती है। अतः यह आवश्यक है भूमि समाज की सम्पत्ति समझी जाए और समाज जिस भूमि व्यवस्था द्वारा अधिक से अधिक लाभ समझे, उस व्यवस्था के अनुसार ही भूमि व्यक्तियों को प्रदान करे।

अब यह विचारणीय है कि सामाजिक हित की दृष्टि से सर्वोत्तम तथा क्रियात्मक भूमि-व्यवस्था किस प्रकार की होनी चाहिए।

यह ध्यान में रखना चाहिए कि जब हम यह कहते हैं कि भूमि समाज की सम्पत्ति है, इस से यह न समझ लेना चाहिए कि अब भूमि में व्यक्तियों का किसी प्रकार का स्थान न रहेगा। समाज तो केवल उन व्यक्तियों का ही दूसरा नाम है जिन के संगठित व्यवहार समूह है। जब भूमि समाज के अधिकार में आ जाती है तब भी उस पर कृषि तो व्यक्तियों ने ही करनी है, किसी और ने नहीं करनी। परन्तु इस अवस्था में पहली अवस्था से भेद इसी अंश में होगा कि अब कोई अपने वंशपरम्परागत अधिकारों के कारण कुछ व्यक्तियों का शोषण न कर सकेगा, और बिना किसी विशेष प्रकार का परिश्रम किए समाज की सम्पत्ति का भोग विलास में अपव्यय न कर सकेगा। वर्तमान समय में सामाजिक परिस्थितियों के परिवर्तन के कारण सम्पत्ति का बहुत बड़ा अंश जो अनर्जित आय (Unearned Increment) के रूप में भूमिपतियों के पास जाता है वह न जा सकेगा। भूमि का [illegible] देश में सब के हित की दृष्टि से ही उपयोग किया जाएगा। विदेशी व्यापार तथा आन्तरिक खपत की दृष्टि से जिस अनाज की जितनी मात्रा की आवश्यकता होगी उतनी ही पैदा की जाएगी, देश के अन्

तथा पूंजी को व्यक्तिगत स्वार्थों द्वारा शोषण न किया जायगा। देश की आर्थिक सम्पत्ति को बढ़ाने के लिए उद्योगों पर अधिकार कर लिया जायगा, जिससे देश की कृषि तथा व्यापार को संरक्षण तथा प्रोत्साहन मिले। जब तक भारत विदेशी सरकार के शिकंजों में जकड़ा हुआ था तब तक वह अपनी आर्थिक अवस्था के सुधार के स्वप्न ही न ले सकता था। आज जब शासन सूत्र हमारे अपने हाथों में आ गया है हमें इसकी ओर ध्यान देना चाहिए, और सब राष्ट्रों की आर्थिक दौड़ में सम्मान योग्य पद प्राप्त करना चाहिए।

मानव समाज की प्रारम्भिक अवस्थाओं में जन संख्या के कम तथा भूमि की के विपुल मात्रा में सिद्ध पड़े होने के कारण भूमि पर किसी प्रकार के अधिकार की समस्या ही न थी। जिस व्यक्ति की जहां इच्छा होती थी वहां कृषि कर लिया करता और अपना जीवन निर्वाह कर लिया करता था। परन्तु आज अवस्था ठीक इसके विपरीत है, भूमि की मात्रा तो उतनी ही है, परन्तु उस पर बहुत अधिक जनसंख्या के पालन पोषण का बोझ पड़ गया है, इस लिए आजकल यह आवश्यक हो गया है कि अधिक अधिक मात्रा में अन्न पैदा किया जाए। इस के लिए घनी खेती तथा खेती के लिए वैज्ञानिक साधनों के प्रयोग की आवश्यकता है। और यह भी आवश्यक है कि कृषकों की भूमि में विशेष प्रकार की रुचि हो। प्रारम्भिक अवस्था में जन संख्या के कम होने के कारण यह समस्या बहुत जटिल न थी, लोग घनी खेती न करते थे अपितु व्यापक भूमि पर थोड़े परिश्रम से उपज ले लेते थे। और व्यापक भूमि पर खेती करने के लिए विजित जातियाँ पराजित जातियों को दास बना कर काम कराती थीं, जिन को का उपज से अधिक [illegible] कोई समस्या [illegible]।

अतः उनकी भूमि में किसी प्रकार की कमी न होती थी। उस समय की दृष्टि से यह बहुत आवश्यक भी न था। परन्तु आज अवस्थाएँ बिलकुल विपरीत हैं, जनसंख्या में बहुत अधिक वृद्धि होगई है, अतः भूमि पर बहुत बोझ पड़ गया है। भूमि की लगान की समस्या बनाते हुए इस प्राचीन व्यवस्था में लौट कर नहीं जा सकते। अधिक से अधिक अनाज की उत्पत्ति के लिए यह आवश्यक होगा कि किसी प्रकार से किसान की भूमि में शक्ति बनी रहे, वह कृषि की उन्नति के लिए नवीन साधनों का प्रयोग कर सके।

इसके लिए आवश्यक है कि प्रत्येक किसानों को उतना भूमिखण्ड कृषि करने के लिए दे दिया जाए, जिस पर वह अपने परिवार के श्रम तथा पूंजी का अच्छे से अच्छा उपयोग करते हुए सन्तोषजनक रीति से जीवन निर्वाह कर सके। पारिभाषिक शब्दों में इस प्रकार के भूमिखण्ड को हम 'उपयुक्त-क्षेत्र' कह सकते हैं। उपयुक्त क्षेत्र पर किसान ~~को किसी प्रकार~~ का केवल ~~कृषिकार्य~~ तब तक कृषि कर सकता है जब तक वह उचित माल गुजारी सरकार को चुकाता रहे। कृषि करने के अतिरिक्त भूमि पर किसान का किसी और प्रकार का अधिकार नहीं है; वह उस भूमि को बेच नहीं सकता, किसी को ठेके पर नहीं दे सकता और ~~रेहन रख~~ ऐसा भी नहीं हो सकता कि स्वयं उस पर कृषि न करे और किन्हीं अन्य कृषि श्रमियों को ही उस पर नियुक्त कर दे। इस प्रकार किसान का ~~भी~~ भूमि पर अधिकार बहुत नियन्त्रित हो जायेगा और इस व्यवस्था के प्रायः जमींदार प्रथा के दोषों के उत्पन्न होने की भी सम्भावना न होगी। यदि उसे बेचने, खरीदने, ठेके पर देने आदि का अधिकार दिया जायगा तो इस प्रकार

विषमता का समूलोन्मूलन कर समता के स्थापित कर देने पर भी कुछ वर्षों में विषमता पुनः भयानक रूप धारण कर लेगी। इसलिए इसलिए जब हम विषमता को दूर करने उपाय सोच रहे हैं, हमें कोई ऐसा इस का कोई स्थायी उपाय सोचना चाहिए। सामाजिक अवस्था में इतना परिवर्तन करने के उपरान्त भी यदि वह सामयिक ही रहे, और कुछ वर्षों के बाद हमें पुनः आगे भी अधिक उग्र रूप में इन समस्याओं का सामना करना पड़ा तो हमारे इस सारे प्रयास का क्या प्रयोजन? राष्ट्रीय सरकार ने अपने नवीन 'भूमि अधिकतम नियन्त्रण' विधान में जिस उपाय के अवलम्बन करने की देश के समक्ष प्रस्ताव उपस्थित किया है, उसकी विशेषता यह है कि वह बीमारी का सामयिक इलाज नहीं है अपितु वह इस बीमारी को जड़ से उखाड़ देता है। अतः देश के नेताओं और विचारकों को सरकार की इस योजना को सफल बनाने का पूरा प्रयास करना चाहिए।

इस नवीन व्यवस्था से कोई किसान इतने बड़े भूमिखण्ड को न रख सकेगा, जिस पर नवीन साधनों के प्रयोग द्वारा अधिक उत्पत्ति करके बहुत अधिक लाभ प्राप्त कर सके। प्रान्तीय तथा स्थानीय अवस्थाओं के अनुसार उपयुक्त क्षेत्र की भिन्न २ निश्चित मात्रा होगी, जिस पर एक परिवार अपने श्रम तथा पूंजी का सर्वोत्तम रीति से उपयोग करता हुआ सरलता सर्वसाधारण समाज के जीवन निर्वाह के मान के अनुसार जीवन निर्वाह कर सकेगा। यह सत्य है कि एक किसान अपने छोटे से भूमिखण्ड को जोतने के लिए नवीन साधनों का प्रयोग नहीं कर सकता, परन्तु इससे ऐसा नहीं

हो जाता कि नवीन साधनों के प्रयोग का अवसर ही न रहे। यदि कुछ कृषक मिल कर एक कृषक संघ स्थापित कर लें, तो वे इकट्ठे मिल कर के नवीन साधनों को खरीद भी सकेंगे, और उन का उपयोग भी कर सकेंगे। इससे हर एक किसान पर बहुत कम आर्थिक बोझ पड़ेगा और वह नवीन साधनों का उपयोग भी सरलता से कर सकेगा। सरकार इस प्रकार के कृषक संघों की स्थापना के लिए कृषकों को अपने मित्रों द्वारा प्रोत्साहन देती रहेगी। इस से भूमि खण्डों के छोटे परिमाणों में विभक्त हो जाने से भी कृषि की उन्नति में किसी प्रकार की बाधा न पड़ेगी। और इस का लाभ यह होगा कि अब इस प्रकार कृषि की उन्नति से जो लाभ होगा वह किसी व्यक्ति विशेष की तिजोरियों में न चलता चला जायेगा, अपितु वह सब किसानों में समान रूप से विभक्त हो जायेगा। और इस के अतिरिक्त एक लाभ यह होगा कि किसानों की कृषि की उन्नति में रुचि बन रहे, क्यों कि अब उन्हें इस व्यवस्था से स्पष्ट लाभ प्रतीत होगा और वह लाभ भी उन्हें ही मिलेगा, किसी और के पास न चला जायेगा तब वे इस नवीन व्यवस्था का सच्चे हृदय से स्वागत करेंगे।

राष्ट्रीय सरकार का उद्देश्य देश को इस प्रकार की नवीन भूमि व्यवस्था प्रदान करना है। परन्तु यह एक दम एक कानून के बन जाने से स्थापित न हो जायेगी। परन्तु इस ओर हमें धीरे २ बहुत सावधानी से चलना होगा। भारत के कृषकों पर अज्ञान का [illegible] है और अन्धकार का पर्दा पड़ा हुआ है। उन के भूमि के बारे में [illegible] कुछ मुद्दत से धार्मिक विचार भी जुड़े आते हैं, उन्हें नवीन व्यवस्था की उपयोगिता सरलता से समझाना।

"भूमि व्यवस्था का इतिहास"

(राधा कमल मुकर्जी)

प्राकृतिक विभिन्नताओं, कृषि सम्बन्धी हालतों, विभिन्न जातियों तथा राष्ट्रों को अपने अन्दर मिलाने की शक्तियों के साथ ही साथ भारतवर्ष Land tenure के विषय में भी बहुत ही पेचीदा है. हिन्दू काल में भूमि पर किस का अधिकार होता था यह प्रश्न अब भी हमारे सामने एक जटिल समस्या रख देता. विद्वानों की एक मण्डली (जिस में वीडन पावल भी है) यह मानती है कि भूमि राज्य की थी और किसान खेती करते और भूमि का किराया दिया करते थे और कुछ विद्वान यह मानते हैं कि भूमि पर कृषकों का पूरा स्वत्व होता था राजा को केवल कर लेने का अधिकार था परन्तु किसानों का वह स्वत्व राजा के प्रसन्न रहने तक ही रहता था. यह प्रश्न विद्वानों के लिये अब भी वैसा ही है फिर भी हमें ज्ञात होता है कि किसानों को भूमि के साथ कुछ लगाव था और राजा केवल अपने हिस्से तक — चाहे उसे कर कहें चाहे किराया — ही अपना अधिकार समझता था.

कई सम्मिलित परिवारों के मिलने से ग्राम बन गये हर एक परिवार के खेत अलग थे परन्तु चरागाहें और लकड़ी के लिये जंगल सब के लिये एक जैसे थे. असल में ग्रामीण लोग एक ही माता पिता की सन्तान थे और उन में बाहर वाला कोई न था. जब ग्रामों ने बाहर वालों को भी बसने की आज्ञा मिल गयी तो Temporary tenancies का प्रश्न उठा — वास्तविक और अवास्तविक जमींदारों का प्रश्न उठा. वास्तविक जमींदार की भूमि उस की सन्तान को मिलती थी और उसे बेचने तथा रहन पर रखने का अधिकार भी उसके स्वामी को होता था. परन्तु बेचते समय या रहन रखते समय यह ध्यान रखना होता था कि वह अपने ही ग्राम वाले को दी जावे. वास्तविक किसान को हटाया नहीं जा सकता था जब तक कि वह कर ठीक तरह देता रहे पर अवास्तविक जमींदार को स्वामी की मरज़ी से निकाला जा सकता था. लेकिन यदि उस का स्वामित्व किसी भूमि पर एक पीढ़ी से अधिक रहे तो वह भी वास्तविक किसान बन जाता था.

वैदिक काल में ही ग्राम बन चुके थे राजा अपने आप को बलि का — एक प्रकार के कर का हकदार समझता था. पूरे ग्राम से सम्मिलित बलि ली जाती थी बाद में भी हिन्दू काल में यह सम्मिलित कर के रूप में चलती रही और यह अनाज की उपज की $\frac{1}{6}$ राशि होती थी. पहिले ग्राम का मुखिया यह कर किसानों से लेकर राजा तक पहुंचाता था इस के बदले में उस का कुछ भाग पाता था जैसे जैसे राज्य बढ़ते गये मुखिया तथा राजा के बीच में और बहुत से कर्मचारी रहने लगे वेतन के स्वरूप में वह भी उस कर का कुछ भाग रख लेते थे मन्दिरों तथा विजेता राजाओं को और जाति के सेवा करने वालों को भी इस कर में से हिस्सा मिला करता था. कहीं कहीं किन्हीं किन्हीं व्यक्तियों को कृषि करने का पूरा अधिकार दिया और यह अधिकार [illegible]

अथवा वंशानुगत बन गये. यही लोग जब कभी राज्य कमजोर होता तो भूमि के स्वामी बन बैठते और आस पास की प्रजा को सताते थे. और उन से स्वयं कर लेने लगते इन के कारण किसानों की हालत गिर गई और धीरे धीरे वह भूमि के स्वामी की जगह किसी जमींदार के आसामी बन गये
कहने के लिये मुसलमानों के आने पर Land tenure (भूमि व्यवस्था) बिलकुल बदल गया क्योंकि इस्लामी कानून के अनुसार भूमि का स्वामी राजा होता था परन्तु क्रियात्मक रूप से उसमें कोई परिवर्तन नहीं आया. हिन्दू और मुस्लिम कर ग्रहण के तरीके बहुत कुछ मिलते जुलते थे मुसलमानों ने भी कुछ थोड़े से परिवर्तन के साथ उसी परिपाटी को चलने दिया कर $\frac{1}{6}$ से उठाकर $\frac{1}{3}$ अथवा उपज का $\frac{1}{2}$ कर दिया गया और ग्राम के मुखिया से उपज के स्थान पर रुपया लिया जाने लगा कहीं कहीं कर सीधा किसान से भी ले लिया जाता था. सत्रहवीं शताब्दी तक जमींदारों अथवा बीच के दलालों ने अपनी स्थिति को स्वत्व बना लिया जमींदार अधिक से अधिक कर लेने के लिये प्रयत्नशील रहता था जमींदार बदलते रहते थे और प्रायः किसी निश्चित समय के लिये उन्हें रखा जाता था मगर मुग़ल राज्य की बरबादी के साथ ही साथ जमींदारी प्रथा heriditary वंशानुगत हो गयी.

जब ईस्ट इंडिया कम्पनी का आगमन हुआ तो उसने भी यहां के विषय को अति कठिन समझकर इन जमींदारों से सहायता ली. परन्तु उस की यह स्कीम चल न सकी और १७९३ में लार्ड कार्नवालिस ने एक दवामी बन्दोबस्त (   ) किया. जहां अंग्रेज़ भारतीय राजाओं तथा जमींदारों की सत्ता मिटाना एक राजनैतिक मूर्खता समझते थे वहां उन्हें अपने स्वामित्व में और जमींदारों के स्वत्व में भेद करना भी कठिन लगता था अन्त में कम्पनी ने यह निर्णय किया कि जमींदार ही भूमि के स्वामी रहेंगे तथा वह कम्पनी को धन की एक निश्चित राशि देते रहेंगे. यहां से खुदकाश्त किसानों के हक़ हमेशा के लिये छिन गये इन से जो कर लिये जाते थे उन की राशि बहुत अधिक थी बिचारे किसानों की ज़मीनों का नीलाम किया जाने लगा और समय समय पर जो कानून जमींदार की सहायता के लिये बनाए गये उन्होंने ग़रीब किसान को और भी पीस दिया और ५० वर्ष के अन्दर अन्दर ही भूमि के स्वामित्व तथा स्वत्व को बिलकुल बदल दिया.

यद्यपि १८५९ के बाद बंगाल में जो कानून बने उन्होंने किसान को सांस लेने की जगह दे दी फिर भी बंगाल के १८८५ वाले Tenancy act ने यह प्रयत्न किया कि अधिक से अधिक लिया जावे. अभी तक जमींदारी का यह ज़हर केवल बंगाल में था परन्तु अब उस को बनारस आगरा और अवध में भी फैलाया गया. जमींदार अपने स्वामित्व का लोगों को पट्टा दिया करता था और इस प्रकार पटनीदार, दरपटनीदार, से पटनीदार आदि पचासों अधिकारी और बनाये गये जो सरकार और किसान के बीच में दलाली करते थे. पूर्वीय बंगाल में स्वामित्व के अधिकार की लगभग आठ दस तहें हैं और फिर उन में भी हिस्से. इसी के कारण सैकड़ों अबवाब आदि की रचना की गई —— इसी को कहते हैं कोढ़ में खाज.

महाराष्ट्र में भी एक प्रकार की जमींदारी प्रथा चल गई मराठा राज्य में ग्रामों की मालगुजारी वसूल करने का कार्य पटेलों को सौंपा गया था यह पटेल सरकारी नौकर हुआ करते थे परन्तु अंग्रेज़ों ने आ कर उन्हें मालिक बना दिया — यद्यपि उनको बंगाली जमींदार के बराबर अधिकार नहीं - इसी

प्रकार प्रबन्ध में भी बड़े बड़े किसानों तथा जागीरदारों को भूमि का स्वामी बना दिया और १८५० के पहिले
राष्ट्रीय संग्राम के बाद उन को विशेष अधिकार दिये गये - मुनरो ने जब कि वह मद्रास का गवरनर था देखा कि
बहुत से ग्रामों में एक मुखिया कर इकट्ठा किया करता है तो उसने
इस प्रथा को ठीक न समझ कर रय्यत वाड़ी प्रथा चलाई अर्थात उस ने प्रत्येक व्यक्ति से कर लेना शुरू किया इस प्रकार
पुराने पञ्चायत सिस्टम को बिलकुल तबाह कर दिया मद्रास से यह जहर बम्बई में भी फैल गया. गवर्नर ने अधिक से अधिक
कर नियत किया गया जिस के कारण प्रजा आफ़त में पड़ गई और जब कभी नया बन्दोबस्त हुआ तो कर बढ़ाया ही जाता
रहा यही रय्यत वाड़ी सिस्टम बरार, आसाम तथा बर्मा में चलाया गया.

उन के अन्दर एक भैया चारा हुआ
पंजाब और युक्त प्रान्त में ग्रामीण लोग प्राय: कृषक हैं
करता था मगर ग्राम के राजपूत आदि अपने आप को उन से ऊंचा समझा करते थे उन्हों ने अपनी
सम्भावना ली और village communities के अधिकारों को बुरी तरह कुचल दिया अब वह विचारे
Landlord की हैसियत से न रह कर अपनी भूमि के Inferior Proprietor रह गये, अब चरागाह,
पानी का प्रबन्ध आदि विषय भी इकट्ठे नहीं रहे. यद्यपि नाम के लिये पहिले पहिल ब्रिटिश सरकार
ने इन के लिये सारे ग्राम को इकट्ठा जिम्मेदार बनाया परन्तु फिर भी ब्रिटिश अफ़सरों नीति ने इस को
सदैव कागज़ पर ही रखा कार्य में परिणित न होने दिया।

ग्रामीण पंचों के अधिकार छीन कर और कर वसूल करने के लिये जमींदार
बना कर सरकार ने ग्रामीण जीवन को बड़ी क्षति पहुंचाई बंगाल, बिहार युक्त प्रान्त महाकौशल
में वही भूल दुहराई गई अर्थात पहिले तो सारे अधिकार जमींदारों को देकर ग्रामीण जीवन का
गला घोट गया फिर गरीब आसामी लोगों को बचाने के लिये दो एक कानून बनाए जाते रहे परन्तु
दो एक क्या बीसियों कानून भी गरीब किसान को उच्छृंखल जमींदार के जुल्म से बचाने के लिये पर्याप्त
नहीं हैं जमींदारों ने आसामी लोगों के अधिकार बहुत सीमित कर दिये जबर्दस्ती टेक्स
लगाने शुरू किये परन्तु उन्होंने कभी सिंचाई आदि के — पब्लिक के भले के कार्यों में
कभी हिस्सा नहीं लिया। इस प्रकार आज कल आसामियों और जमींदारों में कोई बहुत
अच्छा सम्बन्ध नहीं है और आसामियों की आफ़त का कारण एक यह भी है कि जमींदार उन
को केवल अपनी आमदनी का साधन समझता है वह स्वयं उन की देख भाल करने की जगह
पचासों गुमाश्तों और एजेण्टों के द्वारा उन से काम लेता है भारत में ५२ % भूमि रय्यत
वाड़ी है तथा ४८ % पर जमींदारों का अधिकार है । इस पर भी जो रय्यत वाड़ी जमीन है
वह भी पट्टे पर दे दी जाती है और रय्यत वाड़ी जमीन के ३०% मालिक स्वयं कृषक नहीं हैं
केवल पंजाब में कर लेने वालों (Rent receivers) की संख्या ६०२६,००० से बढ़ कर
१०००८००० तक पहुंच गई है इन्हीं परिस्थितियों ने अभी कृषक को तबाह कर दिया है।

चकबन्दी का अभाव या उस की दुर्दशा, अमीर और गरीब में रगड़ अभी
कृषक और साहूकारों के झगड़े यह सब इस चीज़ का परिणाम हैं कि British सरकार
भारतीय भूमि व्यवस्था (Village tenure) को समझ नहीं पाई। लोगों के पास बहुत
छोटे छोटे जमीन के टुकड़े हैं उन में भी कोई टुकड़ा कहीं पड़ा है तो कोई कहीं दक्षिण के किसी
ग्राम में जहां पहिले १८वीं में प्रत्येक आदमी के पास चालीस एकड़ भूमि थी वहां १९१५ में प्रत्येक के पास सात

एकड़ का औसत रह गया। इन में भी ६०% ऐसे थे जिन के पास ५ एकड़ से भी कम थे। इस का कारण बढ़ती हुई आबादी भी हो सकती है परन्तु Laws of inheritance भी एक बहुत बड़ा कारण है इस के लिये कॉपरेटिव सोसाइटीज़ आदि बनाई गई हैं प्रत्येक दशाब्दी में बिना भूमि वाले लोगों की संख्या बढ़ती जाती है। भूमि का बड़ा भाग साहूकारों के पास कर्ज के बदले में जाता ही रहता है और हालत दिन प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है जिस के कारण बीच के लोग खूब मौज कर रहे हैं। किराये बहुत अधिक हैं। ज़मीदार कर वसूल करना जानता है वह अधिक से अधिक लेने का प्रयत्न करता है परन्तु अपनी आमदनी में से एक पैसा भी अपनी प्रजा के भले के लिये खर्च नहीं करता उधर किसान की यह हालत है कि ज़मीदार का कर देने के बाद इस के पास पेट भर खाने के लिये भी नहीं बचता इस पर साहूकारों का व्याज देना और भी जले पर नमक छिड़कता है। यही सब परिस्थितियां हैं जिन्हों ने भारतीय प्रजा को ~~इस बात पर बाधित कर दिया कि वह~~ सत्याग्रह, आज्ञाभंग आदि आन्दोलनों के करने पर बाधित कर दिया और कर देने के भी उन को अयोग्य बना दिया।

[राष्ट्रीय दल इन सब खराबियों को दूर करने के लिये एक कानून बनाना चाहता है। प्रत्येक माननीय सभासद को चाहिये कि वह उपरोक्त राष्ट्रीय दल का साथ दे]

(अनुवादक रवीन्द्र
(स्नातक)

विज्ञापन के लिए रखाली है।

— किसान सहायक निधि —

लेखक—ब्र. लक्ष्मण सिंह १३

कुछ दिन पूर्व की बात है भारत की संसद Parliament में बेकार मनुष्यों पर विचार करते हुए, जब बेकार मनुष्यों की संख्या बतलाई गई तो उनका सर्वेक्षण लगभग 2 करोड़ मनुष्यों का था किन्तु उनकी संख्या में भारत के बेकारों की संख्या न मिलाई गई थी। उस पर भारतीय प्रतिनिधि ने कहा था कि इस सूचि में भारत का योग नहीं है तो इसका यह मतलब नहीं है कि भारत में बेकार हैं ही नहीं। यदि वास्तव में भारतीय बेकारों की संख्या ज्ञात की होती तो भारत में इतने ही बेकार और मौजूद थे। इस समय जब कि भारत में 2 करोड़ मनुष्य बेकार हैं तो यह सोचना आवश्यक है कि इसका क्या कारण है?

भारत के गरीब बेकार हैं जो अशिक्षित होते हैं किसी कार्य के करने में असमर्थ हैं यदि इनकी इस असमर्थता का पता लेते इस प्रश्न का हल तुरन्त हो सकता है कि Insurance की क्या आवश्यकता है। ~~इन बेकारों में अधिक वह किसान हैं~~ इन बेकारों में 1¾ करोड़ बेकार किसान जातीय हैं जो कि अपने आप को रो रहे हैं।

जब एक किसान की किन्हीं कारण विशेष से मृत्यु हो जाती है तो उसकी विधवा स्त्री और तीन चार पुत्र उसके अपने आपको निःसहाय पाते हैं जो बड़ा लड़का होता है वह किसी तरह से माता की अधीनता में अपने छोटे भाइयों को पालते रहते हैं उस अवस्था में वे बड़े लड़के अपना पालन पोषण भी नहीं कर सकते हैं। अधिक विचार करने से वे टुकड़े Economical Holding से छोटे हो जाते हैं इसी अवस्था में उनका निर्वाह नहीं होता और बेकारी आरम्भ होकर एक तरह बढ़ी रहती है। इस समय उन निःसहाय स्त्री तथा पुत्रों का सहायक कोई न कोई होना चाहिये।

पर इनसे में विशेष २ अवस्थाओं
पर जब Government उचित
समझेगी धन दिया करेगा।

३। Insurance Co के साथ
एक इस तरह की Society अवश्य
होगी जो Insured मनुष्यों के
भी कठिन समय पर उनको
धन उचित व्याज पर दे। इस
Act का किस्सा यहां प्रस्तावित क्या
होगा अतः इसको यहीं छोड़कर
इस बात पर आते हैं कि किसान
लोग धन कैसे बढ़ायें।

जैसा कि इस प्रस्तुत
Bill के द्वारा किसानों की अन्य
आवश्यकताओं को पूर्ण किया
जायेगा उससे किसान लोग
अवश्य सम्पन्न हो जायेंगे। ऐसी
अवस्था में किसानों पर Income
Tax भी लगेगा और Rents Taxes
भी लगेंगे।

Government को
Rents और Income tax
को इस प्रकार लगाना कि
इसका एक हिस्सा इन संस्थाओं
को दे दिया जायेगा। यह व्यक्ति
की इच्छा पर होगा कि वह किस
का member बने। जो कोई
का बनना चाहेगा। उसको

यह जरूरी होगा कि वह
एक company का member
Personal रूप से बने और उसकी
किस्त वह स्वयं दे। इस प्रकार
किसानों को घर सहायता भी रहेगा
किन्तु धन नहीं और भी रहेंगे
उनका वह मालिक अवश्य होगा
कि तुम्हारा लगान का इतना हिस्सा
तुम्हारे किसी fund में जमा होगा

अर्थात् जो इस समय :—

$R' = P - C - E$

R' = Rent ; P = Production

C = Cost of Production

E = Expenditure.

वहां उस समय Rent समान
होगा $R = R' + T$

R = New Rent, भविष्य में जो होगा

R' = जो Rent इस समय लिया जाता है

T = वह Tax जो उसके fund में
आयेगा।

यहां सामान्य उसके fund
के लिये अलग वसूल नहीं किया
जायेगा अपितु Rent के साथ ही
वसूल कर लिया जायेगा। जिससे
सारा Government के पास होगा।
इस प्रकार जो fund बनेगा वह
किसानों की future life को बनाने में
सहायक होगा।

गुरुकुल - दिनों दिन
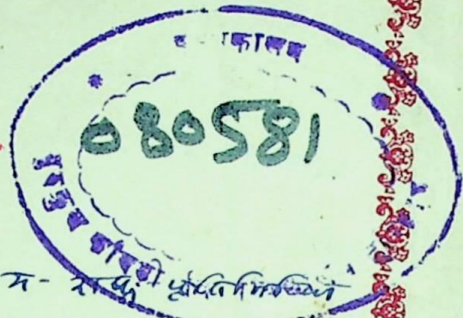
- गुरुकुलीय राष्ट्रप्रतिनिधि सभा के सभापति श्री प्रो॰ सत्यकेतु जी विद्यालंकार कुलभूमि में आ चुके हैं।

- सत्र परीक्षायें लगभग हो चुकी हैं। चतुर्दश श्रेणी इतिहास की विद्यार्थियों की परीक्षा अभी शेष है।

- आज २॥ बजे कोड़ियों के सुधार के लिए वाद्य-सेवन आरंभ गया सुना है - अ, औ व दोनों दलों के मेंबर सेवक किया जावेगा।

- कल इतवार है, जिन भाइयों ने मुजफ्फरनगर जाना है, श्री आचार्य मध्यम जी से पूछ कर जा सकते हैं।

- आज सभा दिवस है। १३वीं और १४वीं की सभा का विचारणीय विषय यह है —

जातितोऽस्पृश्यत्वेन मन्यमानानां शाकलोऽस्य इदानीं सेवनमेति न वा?

वक्ताओं ने बड़ी जोश से भाग लेने की सोची है।

- गुरुकुलीय-राष्ट्रप्रतिनिधि सभा में हिस्सा लेने वाले "साम्यवादी" दल और "श्रमजीवियों" दल ने आपस में समझौता कर लिया है। उन दोनों का एक सम्मिलित पत्र "स्वतंत्र-भारत" अभी प्रेस में है। शीघ्र उसके प्रकाशित होने की सम्भावना है।

- मुजफ्फरनगर से आज भी कोई डाक नहीं आई- 'राष्ट्र-वाणी' के प्रेमी पाठक धैर्य रखें।

आवश्यक सूचना.

कल इतवार होने के कारण कार्यालय "राष्ट्रवाणी" और "स्वतंत्र-प्रेस" दोनों बन्द रहेगा इस लिए ८।९।३८ को राष्ट्रवाणी प्रकाशित नहीं होगी।

प्रबन्धक-
प्रकाशन विभाग
राष्ट्रीय दल।